Library IIAS, Shimla
H 294.562 9 Au 68 P
00099623

श्रीअरविंद

१५ अगस्त

स्वप्न और सिद्धियां

श्रीअरविंद सोसायटी
पांडिचेरी

H
294.5629
A2468P

श्रीअरविंद

१५ अगस्त

स्वप्न और सिद्धियां

श्रीअरविंद सोसायटी
पांडिचेरी

CATALOGUED

Library IIAS, Shimla
H 294.562 9 Au 68 P
00099623

H
294.5629
Au 68 P

Indian Institute of Advanced Study
ACC. NO. 99623
DATE 4-12-200
SHIML

मूल्य रु. ५.००

प्रथम संस्करण : अगस्त १९८६

© श्रीअरविंद आश्रम ट्रस्ट १९८६

प्रकाशक : श्रीअरविंद सोसायटी, पांडिचेरी-६०५००२

मुद्रक : श्रीअरविंद आश्रम प्रेस, पांडिचेरी-६०५००२ (भारत)

विषय-सूची

सन्देश	५
१५ अगस्त	६
स्वप्न और सिद्धियां	४६
भौतिक जगत्में अवतरण	५२

भविष्यमें देखते हुए श्रीअरविंद (१९१६)

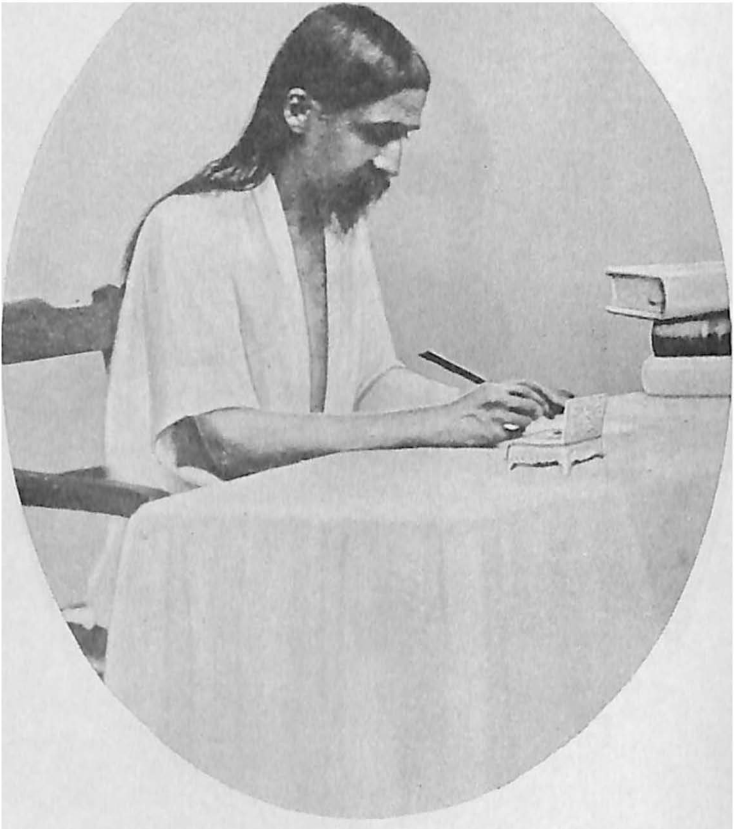

पांडिचेरीमें श्रीअरविंद (१९१८-२०)

संदेश

जीवनका महान् नियम

जीवनका महान् नियम यह है कि कोई योजना नहीं होनी चाहिए किन्तु एक अटल लक्ष्य रहना चाहिए। अगर इच्छा उस लक्ष्यपर केंद्रित हो जाय तो वह उसे संपादित करनेमें लग जाती है, तब परिस्थितियां ही उसे सही राह सुझाएंगी; किन्तु आयोजक हमेशा अप्रत्याशितसे ठोकर खाता है।

—श्रीअरविंद

१५ अगस्त

(श्रीअरविंदके जन्मदिनके बारेमें उनके अपने कथन)

[श्रीअरविंदका जन्म १५ अगस्त १८७२को हुआ था। उनके जन्म-दिनपर ही भारतने स्वाधीनता पायी थी। श्री अम्बालाल पुराणीने अपनी पुस्तक 'ईवनिंग टाक्स'में १९२३से लेकर १९२६तक की हर १५ वीं अगस्तके बारेमें लिखा है। यहां हम उसका भावानुवाद दे रहे हैं।—अनु०]

माताजीने अपने एक संदेशमें श्रीअरविंदके जन्मको विश्व इति-हासमें "शाश्वत" जन्म बतलाया था। किसीने इसका अर्थ पूछा तो माताजीने कहा :

"इस वाक्यको चेतनाके उठते हुए चार स्तरोंपर चार अलग-अलग रूपोंमें समझा जा सकता है :

१) भौतिक रूपसे संसारके लिये इस जन्मके परिणाम शाश्वत रूपसे महत्त्वपूर्ण होंगे।

२) मानसिक रूपसे विश्व इतिहासमें इस जन्मको शाश्वत रूपसे याद रखा जायेगा।

३) चैत्य रूपसे यह एक ऐसा जन्म है जो धरतीपर युग-युगमें हुआ करता है।

४) आध्यात्मिक अर्थमें यह धरतीपर शाश्वतका जन्म है।"

१९७२ श्रीअरविंदकी जन्म शताब्दीका वर्ष था। नये वर्षका आशी-र्वाद देते हुए माताजीने संदेश दिया :

शुभ वर्ष

"यह वर्ष श्रीअरविंदको निवेदित है। वे धरतीपर इतनी उदारता-के साथ जो समस्त प्रकाश, ज्ञान और शक्ति लाये हैं, उसके लिये कृतज्ञता प्रकाशित करनेका सबसे अच्छा उपाय है उनकी शिक्षाको ज्यादा

अच्छी तरह समझना और उसे कार्यान्वित करनेकी कोशिश करना।

उनकी शिक्षा हमें प्रकाश दे, हमें रास्ता दिखाये और आज हम जो नहीं कर पाते, कल उसे कर पायें।

हम पूरी सचाई और निष्कपटतासे उचित वृत्ति अपनायें तो यह सचमुच शुभ वर्ष होगा।"

पहले-पहल माताजीने श्रीअरविंदको भौतिक रूपमें २९ मार्च १९१४ को देखा, उन्होंने पहली दृष्टिमें ही पहचान लिया कि यह वही हैं जिन्हें वे एक जमानेसे अपने अंतर्दर्शनमें देखा करती थीं और जिन्हें वे कृष्णके नामसे जानती थीं, अगले ही दिन माताजीने अपनी दैनन्दिनीमें लिखा :

"उनकी उपस्थितिमें—जो तेरे पूर्ण सेवक हैं, जो तेरी उपस्थितिकी पूर्ण चेतना उपलब्ध कर चुके हैं—मैंने यह अतिशय रूपमें अनुभव किया कि मैं अभी उससे, जो चरितार्थ करना चाहती हूं, दूर, बहुत दूर हूं। और अब मैं जान गयी हूं कि जिसे मैं उच्चतम, श्रेष्ठतम और पवित्रतम समझती हूं वह उस आदर्शकी तुलनामें, जिसे अब मुझे मानना होगा, अंधकार और अज्ञान है। परंतु यह अनुभव, निरुत्साहित करना तो दूर रहा, अभीप्सा एवं साहसको तथा सब बाधाओंको जीत कर अंतमें तेरे विधान और तेरे कर्मके साथ तद्रूप हो जानेके संकल्पको प्रेरित तथा पुष्ट करता है।

थोड़ा-थोड़ा करके आकाश स्पष्ट होता जा रहा है, रास्ता साफ होने लगा है और हम उत्तरोत्तर अधिक निश्चयात्मक ज्ञानमें बढ़ते जा रहे हैं।

अधिक चिंता नहीं अगर सैंकड़ों मनुष्य घने अंधकारमें डूबे हुए हैं। वे जिन्हें हमने कल देखा—वे पृथ्वीपर ही हैं। उनकी उपस्थिति इस बातका काफी प्रमाण है कि एक दिन आयेगा जब अंधकार प्रकाशमें परिवर्तित हो जायगा, जब तेरा राज्य पृथ्वीपर कार्य-रूपमें स्थापित होगा।

हे नाथ, इस आश्चर्यके दिव्य रचयिता, जब मैं इसका चिंतन करती

हूं तो मेरा हृदय आनंद और कृतज्ञतासे उमड़ उठता है और मेरी आशा असीम हो जाती है।

मेरा आदर शब्दातीत हो जाता है, मेरी अर्चना गंभीर हो जाती है।"

१५ अगस्त १९२३

श्रीअरविंदने कहा: पहले हम इस दिनको, मेरे भौतिक जन्मदिनको प्राणिक ढंगसे मनाया करते थे। उसमें आंतरिक सत्यका बीज तो होता था किंतु अभिव्यक्ति प्राणिक ही हुआ करती थी। अब मैं चाहता हूं कि अगर यह दिन मनाया जाय तो वह उस सत्यके साथ मेल खाता हुआ हो जिसका यह प्रतीक है।

तुम सब उस अतिमानसिक सत्यके बारेमें जानते हो जिसे हमारे जीवनमें उतरना है। आजके दिन वह सत्य प्रतीक रूप लेता है लेकिन उसके नीचे आनेमें बहुत-सी बाधाएं हैं। पहले हैं मन और मानसिक भाव जो ऊपरसे आते हुए सत्यको पकड़ कर अपने ही उद्देश्यके लिये उसका उपयोग करना चाहते हैं। उदाहरणके लिये प्राण या जीवनी-शक्तिको लो जो इस उच्चतर शक्तिको पकड़ कर उसे अशुद्ध क्रियाओंमें उंडेलना चाहते हैं। जो सत्य उतर रहा है वह मानसिक नहीं, अतिमानसिक है। उसके भली-भांति काम कर सकनेके लिये जरूरी है कि सभी निचली शक्तियां अतिमानसभावापन्न हो जाएं। निचली शक्तियां इस उच्चतर सत्यका उपयोग अपनी सामान्य निम्नतर गतिविधियोंकी तुष्टिके लिये करना चाहती हैं। जब मनुष्य जीवनके सुखोंमें लगा होता है या अपना जीवन अपने स्वार्थोंको पूरा करनेकी तलाशमें लगाये रहता है तो सचमुच उसमें और उसके द्वारा निम्नतर वैश्व शक्तियां ही सुख भोगती हैं।

यह उच्चतर शक्ति अपनी पूरी शुद्धिमें काम कर सके इसके लिये जरूरी है कि आदमी ऊपरकी महान् शक्तिकी ओर खुल सके, अपने-आपको उसे सौंप सके और जो कुछ उच्चतर सत्यके रास्तेमें आता

है उसे हटा सके। समर्पणकी क्षमता इन्हीं तीन चीजोंपर निर्भर है।

मैं पिछले कई वर्षोंसे इसी काममें लगा हूं कि इन अड़चनों-का सामना करके उन्हें हटाया जाय, रास्ता साफ और तैयार किया जाय ताकि काम तुम्हारे लिये वहुत ज्यादा कठिन न रहे। जहांतक मेरी मददका सवाल है यह पूरी तरह निर्भर है तुम्हारी ग्रहणशक्ति-पर, इस वातपर कि तुम कहांतक सहायताको ले सकते हो। लोगों-का ख्याल है कि आज हर साधकको एक नयी अनुभूति होगी। यह निर्भर है सत्यको अपने अंदर ले सकनेकी तुम्हारी क्षमतापर। वास्तविक आध्यात्मिक समर्पण कोई और ही चीज है लेकिन अगर तुममेंसे किसीने जरा-सी मात्रामें उसकी हल्की-सी छाया भी पा ली तो १५ अगस्तका उद्देश्य पूरा हो गया।

१५ अगस्त १९२३

श्रीअरविंद शामके छह वजे वाहर आये।

शिष्य—क्या हम आपकी साधनाकी वर्तमान स्थितिके वारेमें कुछ जान सकते हैं?

श्रीअरविंद—(स्पष्ट धीमी आवाजमें) मैं उसे स्थिति या हालत नहीं कह सकता, यह एक जटिल गति है। मैं इस समय अति-मानसको भौतिक चेतनामें, भौतिकसे भी नीचे लानेमें लगा हूं। स्वभावसे ही भौतिक जड़ है और सचेतन नहीं होना चाहता। वह वहुत अधिक प्रतिरोध करता है और वदलनेके लिये अनिच्छुक है।

वेदकी भाषामें ऐसा लगता है कि जमीनकी खुदाई हो रही है। यह सचमुच ऊपरके अतिमानससे नीचेके, अतिमानसकी ओर खोदना ही है। सत्ता सचेतन हो गयी है और ऊपर नीचेकी गति सतत चलती रहती है। वेद इसे 'दो छोर' कहते हैं जो सर्पके सिर और पूंछ हैं। ये चेतनाको घेरते और पूर्ण बनाते हैं। मैं देखता हूं कि जवतक जड़ द्रव्यका अतिमानवीकरण नहीं हो जाता तबतक मन और प्राण भी पूरी तरह अतिमानव नहीं बन सकते। इसलिये

भौतिकको स्वीकारना और रूपांतरित करना होगा। मैं अतिमानसके उच्चतम स्तरको भौतिक चेतनामें लानेकी कोशिश कर रहा हूं। आंतर्भासिक मनकी त्रिविध क्रियाओंके साथ मेल खाती हुई अतिमानस-की तीन परतें हैं। पहलीको मैं व्याख्यात्मक (इंटरप्रेटेटिव) अति-मानस कहता हूं। मैं इसे व्याख्यात्मक इसलिये कहता हूं कि जो मनके लोकमें संभावना है वह अतिमानसमें जाकर शक्यता बन जाती है। व्याख्यात्मक अतिमानस सब प्रकारकी शक्यताएं तुम्हारे आगे रख देता है। जो घटनाएं भौतिक जगत्में घट सकती हैं, वह उनका मूल कारण तुम्हें दिखा देता है। जब अंतर्भास अपने समान अतिमानसिक रूपमें बदलता है तो वह व्याख्यात्मक अतिमानस बन जाता है।

दूसरा है जिसे मैं प्रतिनिधि (रेप्रेजेंटेटिव) अतिमानस कहता हूं। वह शक्यताओंकी वास्तविक गतिविधिका चित्रण करता है और यह दिखाता है कि क्या हो रहा है। जब अंतःप्रेरणा अतिमानसिक रूपमें परिवर्तित होती है तो प्रतिनिधि अतिमानसका रूप धारण करती है। यह उच्चतम अतिमानस नहीं है। तुम कुछ क्रिया करने-वाली शक्यताओंको जान लेते हो और बहुत बार यह कह सकते हो कि क्या होगा या अमुक चीज कैसे हुई या हो सकती है लेकिन कोई निश्चितता नहीं होती। अंतमें है अनिवार्य या आदेशात्मक (इंपेरेटिव) अतिमानस जो अन्तःप्रकाशसे मेल खाता है। यह हमेशा सत्य होता है और कोई चीज उसके विरुद्ध खड़ी नहीं रह सकती। यह अपनी अंतर्निष्ठ शक्तिसे अपने-आपको परिपूर्ण करता हुआ ज्ञान है।

मुझे इन तीनोंमें भेद करना है और अनिवार्य अतिमानसको भौतिकमें उतारनेकी कोशिश करनी है। इस तरह ऊपर और नीचे-की सतत गति चलती रहती है। अब पूरी सत्ता सचेतन बन गयी है लेकिन अब जरूरत इस बातकी है कि कोई शक्ति भौतिकपर आक्रमण न कर सके। दूसरी चीज होगी अंदरकी चीजोंपर अनि-वार्य (आदेशात्मक) अतिमानसको लगाना और तीसरे उसे बाहरी चीजों-

पर प्रयोगमें लाना। अभी, जो भी शक्ति शरीरपर आक्रमण करे उसे अतिमानसिक शक्तिसे हटाकर दूर किया जा सकता है। लेकिन जब प्रक्रिया पूरी हो जायगी तो कोई भी सचेतन विरोधी शक्ति शरीरपर आक्रमण कर ही न सकेगी। इन बातोंमें मैं एक विशेष कार्यक्रमका अनुसरण कर रहा हूं जो पांडिचेरी आनेपर मेरे आगे रखा गया था।

शिष्य: फिर प्रश्न है भौतिक अमरताका।

श्रीअरविंद: हां, यदि शरीर उन्मुक्त बन जाय, उसपर कोई आक्रमण न हो तो उसे रखना या छोड़ना अपनी इच्छापर होगा। व्यक्ति उसे त्यागनेके लिये स्वतंत्र होगा। वास्तवमें अनंत कालतक वही शरीर बनाये रखनेके लिये बाधित होना बहुत उबाऊ और नीरस होगा।

शिष्य: क्या उदाहरणद्वारा मन और अतिमानसकी प्राप्तियोंका भेद समझाया जा सकता है?

श्रीअरविंद: मैं एक उदाहरण दे सकता हूं। जब मैंने मानसिक समता प्राप्त की तो महीनोंतक उसमें किसी चीजने बाधा नहीं दी। यह शांकर मतकी समता थी लेकिन असली आध्यात्मिक समता तो तब आती है जब आदेशात्मक अतिमानसका अवतरण होता है। शक्तिकी आत्म-निश्चितता ही दिव्य समता लाती है।

पहले ज्ञानकी इच्छा-शक्ति और ज्ञान संकल्प या यूं कहो शक्ति और अपने-आपको कार्यान्वित करनेवाले ज्ञानमें फर्क करनेमें कुछ कठिनाई होती थी। अब वह नहीं है।

शिष्य: यह कार्य कब समाप्त होगा?

श्रीअरविंद: समयकी कोई निश्चित सीमा नहीं हो सकती।

शिष्य: पिछली बार आपपर जो आक्रमण हुआ था वह कैसा था?

श्रीअरविंद: जब कभी मैं साधनाके एक चरणको पार करनेवाला होता हूं तो सचेतन विरोधी शक्तियां आकर पहले सत्तामें कोई चीज उभारती हैं और मुझे दिखाकर कहती हैं, 'यह देखो,

तुमने इसे नहीं जीता है।' वे आक्रमण भी कर सकती हैं।

शिष्य : क्या वेदमें अतिमानसका विचार है ?

श्रीअरविंद : हां, बहुत स्पष्ट है यद्यपि वैदिक ऋषियोंने आरोहण, उसकी ओर चढ़नेपर जोर दिया है, लौटने और निम्न प्रकृतिको जीतने और उसे रूपांतरित करनेपर नहीं।

शिष्य : क्या यह कहा जा सकता है कि भौतिककी विजयका विचार भी वेदमें है ?

श्रीअरविंद : हां, विचार निश्चित रूपसे है।

शिष्य : क्या आप किसी ऐसे मनुष्यको जानते हैं जो अतिमानसको भौतिक स्तरतक उतार चुका हो ?

श्रीअरविंद : नहीं, मैं नहीं जानता।

शिष्य : क्या गीतामें अतिमानसको नीचे लानेपर जोर दिया गया है ?

श्रीअरविंद : नहीं, वहां कर्मपर जोर है, अतिमानसपर इतना अधिक नहीं, इसके अतिरिक्त गीतामें बहुत-सी चीजें हैं।

१५ अगस्त १९२४

इस दिनका वर्णन कौन कर सकता है ? कल्पना, कविता, और भारी भरकम अलंकार इसकी शोभा नहीं बढ़ा सकते। इतना ही कहना काफी है कि यह पन्द्रहवीं अगस्त थी। और कोई दिन आध्यात्मिक क्रियाकी गहराई, तीव्रतामें इसतक नहीं पहुंच सकता।

सभी शिष्योंमें समर्पणके आनंदकी बाढ़ आयी हुई है, सब लोग सब कुछ त्याग चुके हैं, आत्म-समर्पण कर चुके हैं। आह ! सब कुछ हल्का लग रहा है, कोई है जो हमारे सब भार अपने ऊपर लेकर हमें मुक्त कर देता है, इनमें परम प्रेमकी शक्ति है, इनपर पूरी तरह विश्वास किया जा सकता है। बस सब कुछ दे दो फिर न कोई चिंता रहेगी न कोई परेशानी। बस करने लायक चीज एक ही है प्रेममय समर्पण।

हर चेहरा आनंदसे दमक रहा है, हर एकमें सुख और आनंद समा नहीं रहे हैं लेकिन इस आनंदके लिये कोई बाहरी कारण नहीं है। तो यह असीम आनंद आ कहांसे रहा है? कहते हैं पिछले दो-तीन वर्षोंसे गुरुको किसीने इतना आनंद-विभोर नहीं देखा।

सवेरेसे आश्रम क्रिया-कलापसे गूंज रहा है। फूल, पत्ते, मालाएं चारों ओरकी शोभाको बढ़ा रहे हैं। यूं तो हम श्रीअरविंदको रोज ही देखते हैं पर आज दर्शनका दिन है, किसी ऐसे वैसे मनुष्यका नहीं परम दिव्यताके दर्शनका दिन है।

वह रहे श्रीअरविंद। उनके बैठनेके ढंगमें ही दिव्य आत्म-विश्वास झलक रहा है। जिन्होंने इसका रस पाया है वही इसे समझ सकते हैं। जो इस प्रेम सागरमें एक बार गोता लगा चुके हैं वे इसमेंसे निकलना नहीं चाहते। साधारणतः श्रीअरविंद ज्ञानकी मूर्ति दिखायी देते हैं पर आज वे प्रेममय हैं, महान कवि और परम प्रेमी हैं।

मन पूछता है इन्हें क्या अर्पण करूं? इनसे क्या मांगूं, हृदय पूछता है। मन अपने सर्वस्वकी भेंटकी नगण्यताको जानता है और इसलिये मौन है, हृदय अपने भिखारीपनके कारण लज्जित है।

यह सब दर्शनसे पहलेकी बात है, उनके सामने जाते ही समस्त उत्सुकता, सारा गर्व, सभी विचार, सारे प्रश्न, सभी निर्णय दिव्य बाढ़में बह जाते हैं। हृदय पिघलकर अपने-आपको उनके चरणोंमें उंडेल देता है। अब यहां वाणी मौन है। हर एक समता बनाये रखनेकी कोशिशमें हैं, प्रेमका ज्वार सभीको बहाए लिये जा रहा है।

चार बज गये। सब लोग बरामदेमें आकर अपने-अपने स्थानपर बैठ गये। वातावरण आशा और मौनसे भरा है, हर मन मौन भाषामें दोहरा रहा है, "कब आएंगे?" सवा चार हो गये। धीरेसे एक द्वार खुलता है। श्रीअरविंद आ रहे हैं, उनके पीछे लाल पाड़की साड़ी पहने माताजी हैं। श्रीअरविंद अपनी विशेष जापानी कुरसीपर बैठते हैं और उनके दाएं माताजी एक छोटे-से स्टूलपर। पांच मिनटतक एकदम नीरवता रहती है।

श्रीअरविंद एक-एकपर मौन दृष्टि डाल रहे हैं। उन्होंने पूछा, आज तुम लोग क्या चाहते हो? वाणी या मौन? श्रीअरविंद शायद तीस पैंतीस मिनट बोले होंगे और दस पन्द्रह मिनट मौन।

उन्होंने कहा, यह कुछ रिवाज-सा हो गया है कि आजके दिन मैं कुछ बोलूं, मैं नीरव चेतनाद्वारा कुछ कहना अधिक पसंद करूंगा क्योंकि जहां वाणी मनको संबोधित करती है वहीं मौन चेतना गहराई तक जा पहुंचती है। हम सब मिलकर सामान्यतः प्रचलित योगोंसे भिन्न योगका अभ्यास कर रहे हैं। प्राचीन पद्धतिके अनुसार हमें बुद्धि, भाव, इच्छामेंसे किसीको चुनना चाहिये, पुरुष और प्रकृतिके बीच भेद करना चाहिये। इस तरह हम अपने मन, भावमय सत्ता, इच्छा या व्यष्टिगत पुरुषके परे ज्ञानकी अनंतता, सर्व प्रेममय, सर्व-सुन्दर परम पुरुष या अनंत निराकार निर्वैयक्तिक इच्छातक जा पहुंचेंगे।

हमारे योगका लक्ष्य ज्ञान, इच्छा या आनंदकी अनंतताकी तलाश नहीं है। वह परम सत्यकी उपलब्धि चाहता है, एक अनंत ज्ञान चाहता है जो मानव ज्ञानकी सीमित अनंतताके परे है, एक अनंत शक्तिकी खोजमें है जो हमारी व्यक्तिगत इच्छाका स्रोत है और एक ऐसे आनंदकी टोहमें है जिसे भावोंकी उपरितलीय गतियां पकड़ नहीं सकतीं।

हम जिस परम सत्तातक पहुंचना चाहते हैं वह कोई निर्वैयक्तिक अनंतता नहीं है, वह है दिव्य व्यक्तित्व और उसे पानेके लिये हमें अपने सच्चे व्यक्तित्वको जानना और पाना चाहिये। तुम्हें अपनी आंतरिक सत्ताको पहचानना चाहिए। यह व्यक्तित्व आंतरिक मन, आंतरिक प्राण या आंतरिक भौतिक सत्ता या उसकी चेतना नहीं, जैसा कि बहुतसे मान बैठते हैं, वह तुम्हारी सच्ची सत्ता है जिसका उच्चतमके साथ सीधा संबंध है। मनुष्य धीरे-धीरे प्रकृतिमें विकसित होता है और हर एकको अपने दिव्य व्यक्तित्वको जानना चाहिए और वह है अतिमानस। हर एक सारतत्त्वमें भगवान्‌के साथ एक है

परंतु अपने स्वभाव और प्रकृतिमें परम पुरुषकी आंशिक अभिव्यक्ति हैं।

चूंकि हमारे योगका यह उद्देश्य है अतः हम जीवनको ही वदलना चाहते हैं। पुराने योग जीवनको रूपांतरित करनेमें असफल रहे क्योंकि वे मनके परे नहीं गये। वे मानसिक अनुभूतियोंको ले वैठते थे और जव उन्हें जीवनपर लागू करना चाहते थे तो वंधे हुए सूत्र या नियममें वदल देते थे। उदाहरणके लिये अनंतकी मानसिक अनुभूति या वैश्व प्रेमके सिद्धांतको लागू करना।

अतः हमें अपनी चेतनाके सभी स्तरोंपर सचेतन होना चाहिए और उच्चतर प्रकाश, शक्ति और आनंदको नीचे उतार लाना चाहिए ताकि वे जीवनके एकदम वाहरी व्यौरोंपर भी शासन कर सकें। हमें अपने-आपको अलग-थलग करके प्रकृतिमें होनेवाली सभी चीजोंपर नजर डालनी चाहिए, कोई छोटी-से-छोटी, एकदम वाहरी चीज भी हमारी दृष्टिसे वच न पाये। यह प्रक्रिया मानसिक और प्राणिक स्तरोंपर अपेक्षाकृत सरल है लेकिन चैत्य-प्राण और भौतिक स्तरोंपर अज्ञानकी शक्तियोंका राज्य होता है और वे अपनी वातोंको शाश्वत विधान मान कर उनपर डटी रहती हैं। वे उच्चतर प्रकाशके पथमें वाधा देतीं और उनके आगे अपना झंडा वुलंद करती हैं। वहींपर अंधकारकी शक्तियां वार-वार सत्ताको ढक लेती हैं और जव भौतिक प्राणका उद्‌घाटन होता है, अज्ञानके तत्त्व भौतिक-सत्ताके निचले स्तरोंसे ऊपर उठ आते हैं। उनके साथ निवटना वड़े धीरज-का काम है। भौतिक प्राण और भौतिक सत्ताएं उच्चतर विधानको स्वीकार नहीं करतीं और अपनी वातपर डटी रहती हैं। वे वुद्धिका उपयोग करके अपनी वातोंका औचित्य सिद्ध करती हैं और इस तरह भिन्न-भिन्न छद्मवेशोंमें आकर साधकको ठगती हैं।

साधारणतः प्राणिक सत्ता वहुत अधीर होती है और भौतिक प्राण और भौतिक स्तरोंपर झटपट चीजें कर डालना चाहती है लेकिन इसकी वड़ी उग्र प्रतिक्रियाएं होती हैं। मानसिक और प्राणिक सत्ताओंको उच्चतर शक्तियोंको पकड़नेकी जगह अपने-आपको उनके

आगे अर्पित कर देना चाहिए। हमें उच्चतर शक्तिको भौतिक स्तर-तक उतारना चाहिए और उसके द्वारा जीवनकी अत्यंत ब्यौरेवाली चीजोंपर शासन करना चाहिए। मन उनपर शासन नहीं कर सकता। हमें उच्चतर प्रकाश, शक्ति और आनंदको नीचे लाना चाहिए ताकि वे हमारी वर्तमान प्रकृतिका रूपांतर करें। इसके लिये सत्ताके हर अंगमें, शुद्ध, अमिश्रित सच्चाई होनी चाहिए जो स्पष्ट रूपसे देख सके कि सत्ताके हर भागमें क्या हो रहा है और कौन सत्य और केवल सत्यकी मांग करता है।

प्रकाशके नीचे आकर जीवनके ब्यौरेकी छोटी-से-छोटी चीजपर शासन करनेकी दूसरी शर्त यह है कि व्यक्ति अतिमानसमें स्थित अपने दिव्य व्यक्तित्वके बारेमें सचेतन हो।

कई बार साधकोंमें अनुभूतियोंसे ही संतुष्ट हो जानेकी वृत्ति होती है। तुम्हें केवल अनुभूतियोंसे संतुष्ट न हो जाना चाहिए। दूसरी बात यह कि यहां हम सब एक ही उद्देश्यको पानेके लिये इकट्ठे हुए हैं अतः हमारे अंदर एक तरहकी एकता-सी पैदा हो गयी है जिससे हम एक दूसरेकी सहायता कर सकते हैं या एक दूसरेके लिये बाधक हो सकते हैं।

सत्ताके रूपांतरकी शर्तें हैं अपने-आपको उच्चतर प्रकाशकी ओर खोलना और संपूर्ण भावसे समर्पण करना। इससे रूपांतर आता है, अतः यदि संपूर्ण भावसे समर्पण हो, प्रकाशकी ओर उद्घाटन हो और सभी स्तरोंपर धीरे-धीरे चेतनाका विकास हो तो तुम इस योगके आदर्श साधक बन सकते हो।

१५ अगस्त १९२४

श्रीअरविंद पहलेसे ही प्रश्नका अंदाज लगाकर बोले, क्या तुम प्रथा जारी रखना चाहते हो?

शिष्य—मैं आपकी साधनाके बारेमें पूछना चाहता था पर मुझे डर था कि कहीं आप नीरव चेतनाकी ओर संकेत न कर दें।

श्रीअरविंद—क्या तुम चाहते हो कि मैं नीरव चेतनाके बारेमें उसी तरह बोलूं जैसे कार्लाइलने अपने मौनके सिद्धांतके प्रचारके लिये चालीस पोथियां लिखीं थीं ?

शिष्य—लेकिन मुश्किल यह है कि नीरव चेतनासे हमें यह पता नहीं लगता कि अब आप कहां हैं ?

दूसरा शिष्य—हम आपकी अपनी साधनाके बारेमें जानना चाहते हैं।

श्रीअरविंद—मैं बस इतना ही कह सकता हूं कि मैं एक ही चीजको बार-बार, अनेक बार करता जा रहा हूं लेकिन हर बार ज्यादा अच्छी तरह करता हूं।

शिष्य—यह बड़ी अच्छी खोज है।

और एक शिष्य—यह तो हम जानते हैं।

श्रीअरविंद—सच ? मैंने तो समझा था कि यह ताजी खबर होगी। भौतिक स्तर बहुत ही दुराग्रही चीज है और उसपर बार-बार, बार-बार काम करना पड़ता है। तुम एक चीजपर काम करते हो और मान लेते हो कि वह पूरी हो गयी, कोई और चीज सिर उठाती है और तुम्हें फिरसे उसी जमीनपर काम करना पड़ता है। वह मन या प्राणकी तरह नहीं है जहां उच्चतर शक्तिके लिये काम करना ज्यादा आसान है। और फिर मन और प्राणमें तुम ब्यौरेकी चीजोंको छोड़कर एक सामान्य नियम बना सकते हो। भौतिकमें ऐसा नहीं है, उसे सतत धैर्य और ब्यौरेवार कामकी जरूरत होती है।

शिष्य—प्राणमें ऐसा लगता है कि हम घोड़ेकी तरह सरपट भागे जा रहे हैं।

श्रीअरविंद—हां, प्राणमें हमें गतिका अनुभव होता है और सफलता भी दिखायी देती है लेकिन भौतिक हमेशा तुम्हारी प्राप्तियोंको अस्वीकार करता और एक ही चीजको बार-बार दोहराता जाता है, अत: उसके बारेमें मुश्किलसे कुछ कहा जा सकता है।

शिष्य—ऐसे कौनसे चिह्न हैं जिनसे हम यह जान सकें कि भौतिकमें उच्चतर शांतिकी प्रतिष्ठा हो गयी है ?

श्रीअरविंद—किसी भागमें या सारेमें ?

शिष्य—पूरे भौतिक क्षेत्रमें।

श्रीअरविंद—लेकिन उच्चतर अचंचलताका अवतरण होनेके पहले तुम्हें भौतिकके बारेमें सचेतन होना होगा।

शिष्य—कैसे ?

श्रीअरविंद—जैसे तुम्हारे अंदर मनकी, प्राणिक सत्ताकी चेतना है उसी तरह शरीरकी भी अपनी चेतना होती है, जब वह चेतना मौजूद हो तो तुम्हें अचंचलताका ठोस प्रतिष्ठित रूपमें अनुभव होता है। तुम्हें वह इस तरहसे स्थिर मालूम होती है मानों कोई ऐसा ठोस कुन्दा हो जिसे हिलाया तक नहीं जा सकता; मानसिक और प्राणिक धक्कोंकी तो बात ही अलग है, अत्यंत भौतिक धक्कोंसे भी नहीं हिलाया जा सकता।

शिष्य—अपनी साधनाकी वर्तमान स्थितिमें मृत्युके संबंधमें आपकी क्या स्थिति है ?

श्रीअरविंद—स्वयं मेरी ?

शिष्य—जी।

श्रीअरविंद—तीन चीजें मेरी मृत्यु ला सकती हैं—

१) उग्र आश्चर्य और दुर्घटना

२) उम्रकी क्रिया

३) मेरा अपना चुनाव। अगर मुझे यह पता लगे कि इस बार काम पूरा करना संभव नहीं है या मुझे कोई ऐसी चीज दिखलायी जाय जिससे यह प्रमाणित हो कि यह इस बार संभव नहीं है।

शिष्य—कभी-कभी मुझे ऐसा लगता है कि अगर शरीर उच्चतर अचंचलता, शक्ति और आनंदको बनाये रख सके तो वह मृत्युसे मुक्त रहेगा।

श्रीअरविंद—यह तो केवल एक सामान्य नियम है लेकिन भौतिक स्तरपर यह काफी नहीं है। तुम्हें सभी ब्यौरोंपर काम करना होगा। यह तो ठीक भारतके राजनीतिक आन्दोलन जैसी बात हुई जहां एक

व्यापक नियम वना लेना काफी माना जाता है, व्यौरोंके वारेमें माथा-पच्ची नहीं की जाती।

शिष्य—जव प्राणिक सत्ताको अचंचलता, शक्ति और आनंद प्राप्त हो जाय तो कभी-कभी यह विचार आता है कि शरीर भी अमर हो गया।

श्रीअरविंद—यह होता है भौतिक शरीरपर प्राणकी झलक पड़नेके कारण। प्राण-पुरुष अमर है और यह शरीरमें भी अमरताका भाव पैदा करता है लेकिन यह सच्ची विजय नहीं है। चन्दोदमें स्वामी ब्रह्मानन्दकी वात ले लो। वे तीन सौ वर्ष जिये, एक तरहसे उन्होंने शरीरपर जरा, मृत्युके प्रभावपर विजय पा ली थी लेकिन एक जंग लगी कीलके घावसे चलते बने। भौतिक स्तरपर अचानक कोई ऐसी चीज उठ खड़ी होती है जिसपर तुमने क्रिया नहीं की है और वह तुम्हें दिखा देती है कि तुम्हारी विजय अभी पूरी नहीं हुई है। इसी कारण प्रक्रियामें इतना अधिक समय लगता है, तुम्हें अपने शरीरके अणु-अणुमें उच्चतर चेतनाको स्थापित करना चाहिए अन्यथा कोई चीज तुम्हारी नजरसे वचकर निकल जाती है और विरोधी शक्तियां जानती हैं कि वह कमजोर है और वहींसे हमला कर देती हैं। वे परिस्थितियोंका ऐसा मेल पैदा कर देती हैं जो ऐसी चीज खड़ी कर देगा जिसपर कोई क्रिया नहीं की जा सकती और तुम उनपर नियंत्रण कर पाओ इससे पहले वे नियंत्रणसे बाहर हो जाती हैं, उस हालतमें वे तुम्हें नष्ट भी कर सकती हैं।

शिष्य—भौतिक इतना अंधकारमय और हठीला क्यों है?

श्रीअरविंद—यह प्रकृति है। यही व्यवस्था है। अगर भौतिक ऐसा न होता तो चीज आसानीसे और वहुत पहले हो चुकी होती, यूं कल्पों और मन्वन्तरोंकी जरूरत न पड़ती और साधना वहुत आसान होती लेकिन भगवान् नहीं चाहते कि काम आसानीसे हो।

शिष्य—कुछ समय पहले आपने कहा था कि यह प्रयास वहुत

वार किया जा चुका है लेकिन विभिन्न कारणोंकी वजहसे इसमें सफलता नहीं मिल सकी। इस वार सफलता मिलेगी या नहीं ?

श्रीअरविंद—मैं नहीं कह सकता।

शिष्य—लेकिन आपने कहा था कि यह किया जा सकता है। और इस वार कुछ किया जायगा।

श्रीअरविंद—लेकिन 'यह किया जा सकता है' और 'इस वार यह हो जायगा' दोनों एक नहीं हैं।

शिष्य—वह जानना यह चाहता है कि क्या आप अपने पहले वक्तव्यमें कुछ परिवर्तन करना चाहेंगे ?

श्रीअरविंद—मैं बस इतना ही कह सकता हूं, 'मुझसे अगले वर्ष इसी समय पूछ देखना।' इस वर्ष पिछले वर्षकी अपेक्षा मुझे अधिक आशा है। पिछले वर्षकी अपेक्षा अब यह अधिक संभव है। मेरी साधनाके लिये पिछला वर्ष बहुत सख्त था। मेरे ऊपर बहुत अधिक अंधकारमय भौतिक शक्तियोंका आक्रमण हुआ था। इस वर्ष वे चली गयी हैं।

शिष्य—यह समाप्त कब होगा ?

श्रीअरविंद—तुम चाहते हो कि मैं भविष्यवाणी करूं ? यह पूरी तरह मेरे ऊपर निर्भर नहीं है। समयके बारेमें हम मुश्किलसे ही कुछ जान सकते हैं और सीमा बांधनेसे शायद समय और ज्यादा लंबा हो जाय जैसा 'एक वर्षमें स्वराज्य'के साथ हुआ। और फिर जिस योगीको क्रियामें भाग लेना होता है उसे परम पुरुष सब कुछ नहीं दिखाते। जब वैश्व शक्तियां तैयार हों तभी उसे सब कुछ दिखलाया जाता है और जो पूरी तरह तटस्थ हो वह और भी अधिक चीजें देख सकता है और फिर परम प्रभु वैश्व परिस्थितियोंके पूरी तरह तैयार होनेसे पहले हर चीजका विस्तारसे निश्चय नहीं कर लेते। जब परिस्थितियां तैयार हों तो तीव्रतासे आदेशात्मक निर्णय उतरता है। इन दोनोंके बीचमें वैश्व शक्तियोंकी लीला होती है। उदाहरणके लिए किसी ऐसी बीमारीको लो जिसकी ओर तुम्हारा शरीर स्वाभाविक रूपसे प्रवृत्त है। जब तुम उसपर क्रिया कर

चुको तो पता चलता है कि वही चीज किसी और रूपमें उभर रही है। जबतक तुम ब्योरेकी सभी चीजोंके साथ न निबट लो तबतक उससे पिंड नहीं छुड़ा सकते। तबतक तुम्हें केवल संभावनाएं और नैतिक निश्चितियां ही दिखलायी देंगी। ऐसी बात नहीं है कि परम पुरुष निश्चित रूपसे नहीं जानते, वे तबतक हस्तक्षेप नहीं करते जबतक वैश्व परिस्थितियां तैयार न हो जाएं। वैश्व शक्तियां जिस परिणामपर आ पहुंचती हैं वही परम पुरुषका निश्चय होता है।

शिष्य—क्या जहांतक भौतिकका सवाल है वैश्व परिस्थितियां तैयार हैं?

श्रीअरविंद—भौतिक चेतनामें सामान्य शर्तें पूरी हो चुकी हैं लेकिन अभी पूरी तरहसे जड़ स्तर बाकी है और वह सबसे अधिक खतर-नाक है।

शिष्य—वह सबसे अधिक खतरनाक क्यों है?

श्रीअरविंद—क्योंकि वह ठोस, कसा हुआ है, वह अपने पदार्थको अर्पित करने या छोड़नेसे पूरी तरह इंकार कर सकता है। वह समझाने-बुझानेसे बिल्कुल नहीं मानता, उसके साथ व्यवहार करनेके लिये तुम्हें उच्चतम दिव्य शक्तिकी जरूरत होती है। सारे संसारके संस्कार तुम्हारे विरुद्ध होते हैं। ऊपरसे किसी चीजको उतारना और इन बाधाओंको हटाना होगा।

शिष्य—मेरा ख्याल है कि जो लोग धीरे-धीरे चलते हैं वे भी एक दिन भौतिकपर उसी तरह विजय पा सकेंगे जैसे एकाग्र होकर प्रयास करनेवाले।

श्रीअरविंद—हां, लेकिन जो धीरे-धीरे बढ़ते हैं उन्हें हर बार सारी मुश्किलसे भिड़ना पड़ेगा, फिर भी बार-बार मुश्किल आती रहेगी जब कि अंतर्लीन प्रक्रियामें (जिसका मैं अनुसरण कर रहा हूं) काम ज्यादा आसान और तेज होता जाता है, परम शक्तिकी ओरसे एक प्रहार और सारी चीज ठीक-ठाक!

... of ...

१५ अगस्त १९२५, शाम साढ़े चार बजे

हमारे योगका लक्ष्य है अतिमानसिक सत्ताकी, अतिमानसिक जगत् और अतिमानसिक प्रकृतिकी खोज और उनकी अपने जीवनमें अभिव्यक्ति। लेकिन हमें अपने-आपको कुछ ऐसी सामान्य भूलोंसे बचाये रखना चाहिये जो प्रायः हुआ करती हैं। कुछ लोगोंका ख्याल है कि कुछ सिद्धियां जैसे अणिमा, गरिमा आदि, भौतिक क्रिया-कलापपर अधिकार, शरीरको नीरोग करनेकी क्षमता—ये चीजें अतिमानस-भावापन्न शरीरके घटक हैं। कई ऐसे लोग ये शक्तियां पा लेते हैं जो जाने-अजाने अपने-आपको अंतस्तलीय सत्ताकी ओर खोल देते हैं जहां ये शक्तियां पायी जाती हैं। ऐसे बहुतसे उदाहरण हैं जहां ये शक्तियां ऐसे लोगोंमें पायी जाती हैं जिन्हें अतिमानस या योगके बारेमें कुछ भी पता नहीं होता।

कुछ लोगोंका ख्याल है कि इस योगके लिये अनगिनत बार प्रयास किया जा चुका है, कि बहुत बार ज्योतिका अवतरण भी हुआ है और वह बार-बार आकर लौट गयी है। यह बात ठीक नहीं मालूम होती। मुझे लगता है कि अभीतक अतिमानसिक शरीरको नीचे नहीं उतारा गया है अन्यथा वह बना रहता। इसलिये हमें अपने प्रयासको तुच्छ समझ कर उसकी उपलब्धिके मार्गमें बाधाएं न डालनी चाहियें।

अभी समय नहीं आया है कि यह बतलाया जा सके कि अंतमें रूपांतर क्या रूप लेगा। पुराने योगियोंने जो कर दिखाया था वह शारीरिक क्रिया-कलापपर प्राणके नियंत्रणका परिणाम था। वह प्राणिक सिद्धि हमारा उद्देश्य नहीं है जिससे प्राणिक शक्तिद्वारा भौतिक द्रव्य और उसकी क्रियाओंपर अधिकार पाया जा सके। पुरानी साधनाओंका लक्ष्य भौतिक सत्तापर विजय या उसका रूपांतर नहीं था। उन्होंने उसपर कोई पकड़ नहीं पायी थी।

फिर यह विचार है कि चूंकि हर चीज एक है इसलिये हमें एक-

व चेतनाको प्राप्त करना और अपनी सत्ताके विभिन्न स्तरोंपर उसकी छ उपलब्धियां प्राप्त करनी हैं। यह वेदांती विचारोंके प्रभावसे ानेवाली भूल है। हमें बस इतनी-सी उपलब्धि पाकर रुक नहीं ाना, जैसा कि मैंने कहा हमें सारी सत्ताको रूपांतरित करना है।

एक विचार यह है कि हमारा योग सचेतन विकासके लिये एक यास है। आत्मा जड़-भौतिकमें अंतर्लीन है और उसके अधीन ालूम होती है। विकास-क्रिया द्वारा प्राणिक और मानसिक सत्ताएं हां जीवनमें प्रकट हुई हैं। हमारा प्रयास यह है कि मनमेंसे अति-ानसको प्रकट करें।

तैतिरीय उपनिषद्में भौतिकके प्राणमें, उसके मनमें, उसके विज्ञान और फिर आनंदमय चेतनामें उठाये जानेकी बात कही गयी है। एक और उपनिषद्का कहना है कि जो मनुष्य विज्ञान (अतिमानस) को प्राप्त करता है वह सूर्यके द्वारसे बाहर निकल जाता है। विज्ञानतक पहुंचकर उसके सचेतन अवतरणकी बात कहीं नहीं आती।

लेकिन इस प्रक्रियाको प्रतिविकास मानना भी संभव है—अभिव्यक्त सत्ताका अतिमानसकी सत्य-चेतनामें उतरना जो अतिमानसकी पूर्णता-के साथ मनमें, वहांसे प्राणमें और फिर भौतिक सत्तामें उतरती है।

अपनी साधनामें हम यह भी देखते हैं कि एक आरोहणकी गति है लेकिन वही सब कुछ नहीं है, हमें केवल आरोहणसे ही संतुष्ट होकर न बैठ रहना चाहिए। हमें सचेतन रूपसे उतरकर अति-मानसिक ज्योति, सत्य, सामंजस्यको नीचे उतारना है ताकि वे हमारी प्रकृति—मन, प्राण और शरीरपर शासन करें और उसे रूपांतरित करें। इस भांति निचली शक्तियोंका सत्यमें आरोहण होता है जिसमेंसे आत्मा भौतिकमें उतरती है और सारी प्रकृतिमें सत्य अभिव्यक्त होता है।

यह काम सबके बसका नहीं है। लोग सोचते हैं कि हर एक यह योग कर सकता है लेकिन यह आंशिक सत्य है। सबको यह योग करनेकी पुकार नहीं हुई है। यह कहा जा सकता है कि सब लोगोंमें यह योग करनेकी छिपी हुई क्षमता है लेकिन उससे उन्हें

इस योगके लिए एक हदतक तैयारी करनेमें सहायता मिलती है। विस्तृत मानसिक फैलाव, प्राणिक प्रकृतिकी निम्नतर वृत्तियोंको अस्वीकार करनेका कठिन और लंबा काम और उससे भी अधिक कठिन भौतिक सत्तामें परिवर्तन लाना—ये ऐसी चीजें हैं जिनके लिये हर एक कोशिश नहीं कर सकता। हम चाहते हैं कि पहले अपनी सारी सत्ताको अतिमानसिक प्रकृतिमें बदल दें। लेकिन यहींपर इति नहीं हो जाती, हमें उस शक्तिको नीचे बुलाकर बाहरी जीवनपर लगाना और वहां भी सत्य और सामंजस्यको स्थापित करना है। मैं तुम्हें बतला चुका हूं कि अभी वह समय नहीं आया है कि यह कहा जा सके कि अंतिम रूपांतरका स्वरूप कैसा होगा। जब समय आयेगा तो वह अपने-आपको प्रकट करेगा। तुमसे बस यही मांग की जाती है कि अपने-आपको सत्यके प्रति अधिकाधिक खोलो। बाकी सब परम ईश्वरकी इच्छाके अनुसार होगा।

१५ अगस्त १९२५ (शामके सात बजे, श्रीअरविंदसे बातचीत)

श्रीअरविंद—कोई प्रथाको जारी रखेगा?

शिष्य—हम हरी झंडीकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।

श्रीअरविंद—सीटी बज गयी, तुम शुरू कर सकते हो।

शिष्य—हम आपकी साधनाके बारेमें कुछ जानना चाहते हैं।

श्रीअरविंद—(बंगलामें) आमार साधना! आमि कि साधना कोरछी? (मेरी साधना? क्या मैं साधना कर रहा हूं?) कोई और प्रश्न पूछो।

शिष्य—भौतिक स्तरसे लेकर अभीतकके अनुभवके आधारपर क्या आपका ख्याल है कि भौतिक स्तरपर अतिमानसको उतार लाना संभव है?

श्रीअरविंद—क्यों नहीं? अगर यह संभव न होता तो मैं उसके लिये प्रयास न करता। लेकिन अगर तुम्हारे प्रश्नका मतलब हो, क्या इस बार और अभी यह करना संभव है तो और ही बात है।

शिष्य—जी, मेरा यही मतलब था।

श्रीअरविंद—यह सब मेरे बाहरकी चीजोंपर निर्भर है। यह देखना है कि क्या भौतिक स्तर प्रकाश ग्रहण करनेके लिये तैयार है क्योंकि हमेशा ऐसा नहीं होता कि प्रकाश आना चाहे तो भौतिक स्तर तैयार हो।

शिष्य—क्या आप इस विषयमें कोई निश्चिति दे सकते हैं?

श्रीअरविंद—मैंने यह कभी नहीं कहा कि यह निश्चित है।

शिष्य—पिछले साल जब यह प्रश्न किया गया था...

श्रीअरविंद—तो मैंने क्या कहा था?

शिष्य—आपने कहा, "अगले अगस्तमें पूछना।"

दूसरा शिष्य— आपने कहा था, 'पिछले वर्षकी अपेक्षा इस वर्ष यह अधिक संभव है।'

श्रीअरविंद—यह. बात ही और है। मैंने वह दूसरी बात नहीं कही होगी, अब कहता हूं। पिछले वर्षकी अपेक्षा इस वर्ष यह ज्यादा संभव है। (सब हंस पड़ते हैं मानों श्रीअरविंदने बात टाल दी हो।)

श्रीअरविंद—मैं मजाक नहीं कर रहा। ऐसी अभिव्यक्तियां हुई हैं जैसी पहले नहीं थीं। शक्ति अब भौतिक स्तरपर ज्यादा प्रत्यक्ष रूपसे काम कर रही है।

शिष्य—तो क्या अब आप निश्चिति दे सकते हैं?

श्रीअरविंद—मेरी जगह तुम आश्वासन दे सकते हो, मैं नहीं दे सकता। तुम अपने-आप देख सकते हो।

शिष्य—अगर मैं देख सकता तो आपसे न पूछता।

श्रीअरविंद—तो तुम अपनी जिम्मेदारीसे बचकर सारा बोझ मेरे ऊपर डाल देना चाहते हो?

शिष्य—अगर आप मुझे इस तरहसे पकड़ने लगें तब तो मैं कुछ नहीं कह सकता।

श्रीअरविंद—अच्छा, मैं समझता हूं कि तुम मुझसे सत्यकी आशा रखते हो, मधुर मिथ्यात्वकी नहीं। मुझे पिछले दो दिनोंसे यह बात बहुत जोरसे लग रही है, इसीलिये मैं यह कह रहा हूं। यह कोई

व्यक्तिगत प्रश्न नहीं है। मैं सामान्य वातावरणकी बात कह रहा हूं। मैं देखता हूं, मैं देखता हूं कि प्रकाश और शक्तिका जितना अधिक अवतरण होता है, प्रतिरोध भी उतना ही जोरदार होता है। तुम अपने-आप देख सकते हो कि कोई चीज ऊपरसे उतर रही है। तुम जबर्दस्त प्रतिरोधका भी अनुभव कर सकते हो।

शिष्य—इस बार यह एकदम नयी चीज है।

और एक शिष्य—नयी एकदम नहीं है, इस बार इसे प्रकट किया गया है।

श्रीअरविंद—अब चूंकि हम सब निम्न प्राण और भौतिक स्तरोंपर आ गये हैं अतः संघर्ष बहुत अधिक तीव्र है और मैं वहींसे बोल रहा हूं, किसी उच्चतर दृष्टिकोणसे नहीं। (कुछ रुककर 'क' से) नहीं 'क', तुम अपनी जिम्मेदारीसे नहीं बच सकते।

मैं कोई अलग-थलग एकाकी योग नहीं कर रहा, जब मैंने 'हमारा योग और उसका उद्देश्य'में वह वाक्य लिखा था जिसका बहुत दुरुप-योग हुआ है, तो उसके पीछे कुछ सत्य था यद्यपि उस समय मैं उससे अनभिज्ञ था। यह सच है कि मेरा योग मानवजातिके लिये नहीं है लेकिन वह स्वयं मेरे लिये भी नहीं है। निश्चय ही, औरोंके सिद्धि पानेसे पहले यह शर्त है कि पहले मैं सिद्धितक पहुंच सकूं। अगर मैं स्वयं अपनी मुक्ति या अपनी पूर्णता ही चाहता तो मेरा योग कबका समाप्त हो चुका होता।

शिष्य—आपने तीसरे पहरके वक्तव्यमें कहा था कि भौतिक स्तर-पर इससे पहले किसीने परीक्षण नहीं किया।

श्रीअरविंद—मैंने यह नहीं कहा कि भूतकालमें कोई प्रयास ही नहीं किया गया। प्रयास तो किये गये थे पर भौतिक स्तरपर कोई स्थिर प्राप्ति नहीं हुई, कोई आधार नहीं खड़ा किया गया। अगर कुछ किया गया होता तो अधूरा, अधकचरा ही सही, उस आंशिक प्राप्तिका कोई तो चिह्न रहता।

देखो मनमें चाहे जितनी आंशिक उपलब्धि हुई हो पर उसके

लक्षण तो हैं। प्राणमें भी यही दशा है लेकिन भौतिक स्तरपर इसकी कोई निशानी नहीं है।

शिष्य—इसका मतलब तो यह हुआ कि अतिमानसको भौतिक स्तरतक लानेके लिये वातावरण तैयार करना बाकी है।

श्रीअरविंद—यही तो सारा प्रयास है। अगर तुम चाहते हो कि यह इस बार सफल हो तो तुम्हें उसके लिये तैयारी करनी होगी।

(अपनी ओर इशारा करते हुए) यह है केंद्र, इतना आश्वासन तुम इससे ले सकते हो लेकिन अगर हम सफल होना चाहें तो इस सबको एक पक्षमें होना चाहिए। अगर तुम विरोधी सुझावोंको स्थान दो तो जहां तुम अपनी प्रगतिको रोकते हो वहां औरोंके लिये भी सामान्य प्रगतिकी राहमें बाधा खड़ी करते हो।

शिष्य—भौतिक प्रकृतिके प्रतिरोधको रोकनेके लिये क्या करना चाहिए?

श्रीअरविंद—तुम्हारे अंदर सत्यके लिये संपूर्ण अभीप्सा होनी चाहिए। यह सच है कि साधनामें ऐसे समय आते हैं जब मनमें अवसाद आ जाता है और उच्चतर उपस्थितिपर परदा पड़ जाता है, ज्ञान धुंधला पड़ जाता है। ऐसे समय अभीप्सा और श्रद्धा, जिसे रामकृष्ण अंध श्रद्धा कहते हैं, ही व्यक्तिकी सहायता करती हैं। सचमुच वह श्रद्धा अंधी नहीं होती। वह अंतरात्माकी स्मृति होती है। अगर कूएके रोगशमनके लिये श्रद्धा जरूरी है तो अतिमानसको नीचे लानेके लिये वह और भी अधिक जरूरी है। अगर मैं श्रद्धा खो बैठता तो कबका प्रयास छोड़ बैठता।

शिष्य—जी, और कोई होता तो कबका छोड़ देता। (हंसी)

शिष्य—क्या मनसे अतिमानसकी ओर संक्रमण अपने स्वभावमें अतिमानससे उसकी अपेक्षा ज्यादा ऊंचे लोकोंमें संक्रमणकी अपेक्षा अधिक तात्विक और उग्र है?

श्रीअरविंद—तुम्हारा मतलब क्या है? क्या तुम यह जानना

चाहते हो कि क्या वह इतना ही निर्णायक कदम होगा जितना अज्ञानसे ज्ञानकी ओर ?

शिष्य—जी।

श्रीअरविंद—देखो, मन विभाजनके आधारपर काम करता है। वह चीजोंको हमेशा टुकड़ा-टुकड़ा करके लेता है, एक समयमें एक पहलू। उसे लेकर वह यूं काम करता है मानों वही पूर्ण हो। यह आधार ही गलत है।

अतिमानस ऐक्य है और उस ऐक्यके आधारपर ही वह विभाजनको जानता है। वह भगवान्की ओर ले जानेवाली निकटतम भूमिका है। हां, वह मनमें भी काम कर रहा है। लेकिन मनमें तुम सत्यको आंशिक रूपमें खोजते और पाते हो। मन ज्ञानके लिये प्रयास है स्वयं ज्ञान नहीं। मन केवल चित्रित करता है, प्राप्त नहीं कर सकता। वह सत्यको पूरी तरह प्रकट नहीं कर सकता।

अतिमानस प्राणिक स्तरपर भी काम करता है। वहां उसकी क्रिया सहजवृत्तिके रूपमें यथार्थ किंतु गुप्त क्रियाके रूपमें रहती है जो अतिमानसके निकटतम है। लेकिन अतिमानस एकदम भिन्न है। तुम कह सकते हो कि वह कोई स्वचालित चीज है। लेकिन यांत्रिक नहीं। तुम कह सकते हो कि वह अपने-आप सक्रिय सत्य है। एक बार तुम अतिमानसको पा लो तो, अगर चाहो तो सूर्यके द्वारसे होकर निकल सकते हो। अगर तुम उससे ऊपर जाओ तो एक ऐसे लोकमें पहुंच सकते हो जहां किसी सूर्यकी जरूरत नहीं होती। लेकिन अगर तुम अतिमानसको नीचे ला सको तो यह तुम्हारे लिये अधिक संभव और सरल हो जाता है। उसके बाद यह सत्ताका खिलना, स्वाभाविक और सरल विकास ही होता है, लेकिन यहां सारा संघर्ष मन, प्राण और शरीरमें ही होता है।

तुम अतिमानसको पा गये हो इसका एक चिह्न यह है कि तुम्हें विचार करने या सोचने—जैसा कि हम समझते हैं—कोई जरूरत नहीं रहती। अतिमानसमें सोचनेकी जरूरत नहीं रहती। इसका यह

मतलब नहीं है कि वहां कोई विचार नहीं रहता या सब कुछ कोरा ही कोरा रहता है। वहां कोई स्वयंभू चीज होती है जो कार्य करती है।

शिष्य—कैसे ?

श्रीअरविंद—"कैसे" यह तुम न समझ पाओगे।

शिष्य—लेकिन जब कोई विचार ही न हो तो मन कैसे काम करता है ?

श्रीअरविंद—मनमें तुम एक बिंदुसे दूसरे बिंदुतक सोचते हो फिर वहांसे दूसरे बिंदुपर जाते हो तब तुम उन सबको इकट्ठा करके कार्य-कारणके नातेमें जोड़ देते हो। अब मान लो कि ये सारे सैंकड़ों विचार एक साथ उठें, अपने सभी ब्योरोंको एक सेकेंडसे भी कममें प्रकट करें, तो क्या तुम इनकी कल्पना कर सकते हो ? यह है अतिमानसिक विचार।

शिष्य—मैं इसकी कल्पना कर सकता हूं।

श्रीअरविंद—हां, तुम कल्पना कर सकते हो, लेकिन जबतक तुम्हें अनुभव न हो, तुम उसका ठीक भाव नहीं पा सकते।

शिष्य—क्या आप अतिमानसके किसी और पहलूकी बात बता सकेंगे ?

श्रीअरविंद—कोई और पहलू ? यह कोई ऐसी चीज नहीं है जिसे तुम यूं मन द्वारा समझ सको।

शिष्य—फिर भी हमें इससे कुछ तो सहायता मिलेगी ही।

श्रीअरविंद—उदाहरणके लिये युगपत् क्रियाशीलता और विश्राम, क्या तुम इसकी कल्पना कर सकते हो ?

शिष्य—क्या यह सच है कि सभी मानसिक क्षमताओंके साथ मेल खानेवाली क्षमताएं अतिमानसमें भी होती हैं ?

श्रीअरविंद—यह बात मैंने 'आर्य'में लिखी है। मैंने जब आर्य लिखा था तो मैं सीमा प्रदेशपर था। अब मैं वही बात नहीं कहूंगा। हर एकको उस भूमिकामेंसे गुजरना पड़ता है, यह सच है कि तर्क-बुद्धिसे मिलती-जुलती दिव्य मेधा है और तुम कह सकते हो कि जो

दिव्य मेधाकी तरह काम करती है वह अतिमानसकी क्रियासे आती है लेकिन यह है बिल्कुल भिन्न चीज। मैं बात मनकी भाषामें कह रहा हूं। मैं केवल छाया दे सकता हूं, यह सच्ची चीज नहीं है। उदाहरणके लिये तर्कबुद्धि कार्य-कारणका पता लगाती और उन्हें जोड़ती है जब कि दिव्य मेधा सबको उचित संबंधमें रखती है। और भी चीजें हैं जिन्हें मनकी भाषामें व्यक्त नहीं किया जा सकता।

शिष्य—उदाहरणके लिये ?

श्रीअरविंद—विरोधी तत्त्वोंमें समाधान—उदाहरणके लिये पूर्ण नीरवता और पूर्ण अभिव्यंजना, क्या तुम इसे मनकी भाषामें व्यक्त कर सकते हो ?

शिष्य—जब अतिमानस उतर आयेगा तो वह अपनी ही भाषा विकसित करेगा ?

श्रीअरविंद—वहां भाषाकी जरूरत ही नहीं होती। मान लो तुम्हें अतिमानस मिल गया है और मुझे भी मिल गया है तो हमें भाषाकी जरूरत ही न होगी।

शिष्य—तो क्या तब हम सब चुपचाप बैठे रहेंगे सारे समय ?

श्रीअरविंद—तुम्हारे लिये तो यह भयंकर चीज होगी न ?

शिष्य—बरनार्ड शाके नाटक 'बैक टु मेथ्युसिला'में प्राचीन लोग यहां आते हैं और उनके साथ रहते हैं जिन्हें वहां 'बालक' कहा गया है। वे अगर ज्यादा समय रह जाएं तो बालक घबरा उठते हैं।

शिष्य—शायद 'क'को भय है कि तब वह कोई प्रश्न न पूछ सकेगा।

और एक शिष्य—उपनिषद्में याज्ञवल्क्य गार्गीसे कहते हैं, ज्यादा प्रश्न न करो नहीं तो तुम्हारा सिर गिर जायगा।

शिष्य—सिर गिर जाय तो एक आशीर्वाद होगा।

शिष्य—भौतिक स्तरकी विजय प्राप्त हो जाय तो क्या इसका यह मतलब होगा कि उन सब लोगोंमें भी विरोधी शक्तियोंकी पराजय जो योगकी ओर खुले नहीं है ?

श्रीअरविंद—तुम घूम फिरकर वही मानव जातिका प्रश्न ले आते हो

यानी तुम जानना चाहते हो कि क्या इस विजयका अर्थ विश्वविजय होगा। जरा ठहरो, पहले उसे भौतिक स्तरपर स्थापित तो होने दो फिर देखेंगे।

शिष्य—क्या आज पहलेकी अपेक्षा अतिमानसिक अवतरणके लिये परिस्थितियां अधिक अनुकूल हैं? यदि हां तो कैसे?

श्रीअरविंद—भौतिक जगत्का ज्ञान इतना बढ़ गया है कि वह अपनी सीमाएं तोड़नेकी-सी स्थितिमें हो रहा है।

दूसरे, सारे जगत्में बाहरी और भीतरी मन, बाहरी और भीतरी प्राण, बाहरी और भीतरी भौतिकके परदोंको फाड़नेकी कोशिश की जा रही है। मनुष्य अधिक 'चैत्य' बन रहे हैं।

तीसरे, प्राण भौतिकपर इस तरह कब्जा करनेकी कोशिश कर रहा है जैसी उसने पहले कभी नहीं की। यह एक निश्चित चिह्न है कि जब कभी उच्चतर सत्य नीचे आनेकी कोशिश करता है तो वह विरोधी प्राणिक शक्तिको धरतीपर उछालता है और भांति-भांतिकी असामान्य अभिव्यक्तियां दिखलायी देती हैं जैसे पागल होनेवालोंकी संख्या बढ़ जाती है, भूकंप बढ़ जाते हैं इत्यादि। और रेल, तार, हवाई जहाज आदि आधुनिक विज्ञानकी खोजोंके कारण जगत्में ज्यादा एकत्व आ रहा है। यह एकत्व उच्चतम शक्तिके अवतरणके लिए एक शर्त है और यही हमारी कठिनाई है। चौथे, ऐसे लोगोंकी संख्यामें वृद्धि जिनका बड़ी संख्यामें लोगोंपर जबर्दस्त प्राणिक प्रभाव है।

ये कुछ ऐसी निशानियां हैं जिनसे लगता है कि आज वैश्व परिस्थिति ज्यादा तैयार है। हां, हम पिछले प्रयासोंकी परिस्थितियों-के बारेमें कुछ भी नहीं जानते लेकिन जहांतक हम देख सकते हैं ये परिस्थितियां हमारे प्रयासको उचित ठहराती हैं।

शिष्य—क्या आप यह मानते हैं कि वैश्व शक्तियोंका ज्ञान योगका आवश्यक अंग है?

श्रीअरविंद—हां, क्योंकि तुम्हें ऐसी विरोधी शक्तियोंसे काम पड़ता है जो अपना प्रभाव डालती हैं और हमें उन्हें भी जानना चाहिये जो सहायता करती हैं। जब तुम व्यक्तिगत साधना कर रहे हो तब भी

ये शक्तियां अपना अनुभव कराती हैं। हां जब तुम विकसित हो तो उनका रूप पूरी तरह बदल जाता है। इन वैश्व शक्तियोंकी गतिविधि निचले स्तरोंपर शुरू नहीं होती। वह ज्यादा ऊंचाईपर शुरू होती है, यह सच है कि सभी निश्चय ऊपर किये जाते हैं लेकिन उनका जिन स्तरोंसे संबंध होता है उनका पता नहीं लगने दिया जाता। बीचमें एक परदा आ जाता है और हर लोकको अपने निश्चय आप करनेकी छूट दी जाती है। संघर्षमें लगी शक्तियोंको यह छूट दी जाती है कि वे अपना फैसला आप करें। जब निर्णायक मोड़ आ जाता है तब उच्चतम निर्णयकी जानकारी दी जाती है; तुम कम ज्ञानको पानेकी कोशिश करके ज्यादा बड़े ज्ञानके विकासमें सहायता दे सकते हो।

शिष्य—इस योगमें हमारा क्या स्थान है ?

श्रीअरविंद—तुम्हारा स्थान ? इससे तुम्हारा क्या मतलब है ?

शिष्य—मेरा ख्याल है कि मैं समझा नहीं सकता।

श्रीअरविंद—अगर तुम ठीक-ठीक उत्तर चाहते हो तो तुम्हें ठीक-ठीक प्रश्न करने चाहिएं।

और एक शिष्य—शायद वह यह जानना चाहता है कि इसमें साधकोंकी क्या जिम्मेदारी है ?

शिष्य—हां, मेरा यही मतलब था।

श्रीअरविंद—मैंने तो यह बात मजाकमें कही थी क्योंकि 'क' छिटक जाना चाहता था।

शिष्य—लेकिन मैंने उसे गंभीरतासे लिया।

श्रीअरविंद—लेकिन मैंने गंभीरतासे नहीं कहा था यद्यपि उसके पीछे कोई ऐसी बात थी जो गंभीर थी। (हंसी)

शिष्य—तो यह विरोधोंका अतिमानसिक समाधान है (फिर हंसी)

श्रीअरविंद—तुम एकाग्र अभीप्साद्वारा इस प्रयासमें सहायता कर सकते हो लेकिन वह करनेकी जगह अगर तुम विरोधी शक्तियोंके सुझाव सहते चले जाओ और उनके मंत्र जपते रहो जो तुमसे तथा

औरोंसे कहते हैं कि यह संभव नहीं है तो तुम उनकी सहायता करोगे।

शिष्य—मैं एक और प्रश्न करूंगा।

श्रीअरविंद—अब समय हो गया फिर किसी दिन।

१५ अगस्त १९२६ को श्रीअरविंदका वक्तव्य

आज मैं १५ अगस्तके बारेमें कुछ शब्द कहूंगा। एक प्रश्न मुझसे अभी कुछ दिन पहले पूछा गया था। मैंने इस विषयपर कुछ मानसिक और रूढ़िवादी धारणाएं तोड़नेके लिये नकारात्मक उत्तर दिया था।

अब मैं विषयके सकारात्मक पक्षको लेता हूं। इसका एक और पक्ष भी है और अगर यह पक्ष न होता तो इस उत्सवके मनानेका कुछ भी अर्थ न होता। स्पष्ट कारणोंकी वजहसे मैं इसके व्यक्तिगत पहलूके बारेमें कुछ न कहूंगा। मैं साधारण और व्यापक रूपको लेकर यह बतलाऊंगा कि योगके लिये इसका क्या अर्थ हो सकता और होना चाहिए—यही तो हम सबका लक्ष्य है।

तुम सिद्धांत रूपसे जानते हो कि वह लक्ष्य, योग क्या है। वह है धरतीपर साधारण मनुष्यको संतुष्ट करनेवाली चेतना, शक्ति, सत्य, सद्वस्तुसे भिन्न चेतना, शक्ति, सत्यका प्रकाश और दिव्य सद्वस्तुको उतारकर लाना जो पार्थिव चेतनाको ऊंचा उठाने और यहांकी हर चीजका रूपांतर करनेके लिये नियत है।

यह तबतक नहीं हो सकता जबतक कि ऊपरसे निर्णय न हो लेकिन यह तबतक नहीं हो सकता जबतक कि स्वयं पार्थिव चेतना अपने किन्हीं अंशोंमें, उन लोगोंमेंसे कुछमें, जो यहां निचले स्तरपर निवास करते हैं, उसे ग्रहण करनेके लिये तैयार न हो। एक बार यह चेतना, यह शक्ति उतर आये तो वह चिरकालके लिये उन लोगोंके लिये बनी रहेगी जो उसे पानेके लिये इच्छुक और योग्य हैं।

लेकिन हमने इस दिनको एक विशेष महत्त्व दिया है और अगर

हम उस सत्यमें निवास करें जिसका यह प्रतीक है तो यह उचित होगा। हम इस दिनको व्यक्तिगत और सामान्य प्रगतिकी एक भूमिकाके रूपमें मान सकते हैं। इस दिनको उत्सर्ग, आत्म-परीक्षा और भविष्यकी प्रगतिके लिये तैयारीका दिन और अगर संभव हो तो ऐसी शक्तिके स्वागतका दिन बना सकते हैं जो प्रगतिके कामको आगे बढ़ायेगी।

यह काम हर एक व्यक्तिगत रूपसे कर सकता है अगर वह इस दिन सच्ची मनोवृत्ति अपनाए और उचित स्थितिमें रहे। उस दिन मैंने जो कहा था उसका यही मतलब था। असलमें हम लोग ही इस दिनको निर्णायक बना सकते हैं। हम लोग ही इसकी पूर्तिमें सहायक हो सकते हैं।

पहलेसे ही आत्मोत्सर्ग होना चाहिए, अपने अंदर भूतपर नजर डालनी चाहिए कि हम कहांतक पहुंचे हैं, हमारे अंदर कौन-सी चीज तैयार है, कौन-सी चीज नहीं बदली जिसे बदलना बाकी है, कौन-सी चीज एक जटिल रूपांतरके लिये पीछे खड़ी प्रतीक्षा कर रही है, अभीतक कौन-सी चीज प्रतिरोध कर रही है और कौन-सी अंधेरी है। अभीप्सा होनी चाहिए, हम जिस परिवर्तनको जरूरी मानते हैं उसे सिद्ध करनेके लिये शक्तिका नीचे आह्वान होना चाहिए।

अगर हम इस दिन अपनेको इधर-उधर बिखेरते फिरें तो हम कुछ नहीं कर सकते। उसकी जगह होनी चाहिए तीव्र एकाग्रता ताकि आंतरिक सत्ता तैयार होकर प्रकाशको ग्रहण करनेके लिये ऊपरको उड़े। हम जिस अनुपातमें बाहरी रूप देनेवाली गतिको स्वीकार करते हैं, हम उच्चतर क्रियामें बाधा डालते हैं और भीतरी परिवर्तनके लिये जरूरी ऊर्जाका अपव्यय करते हैं। साधारण दिनके क्रियाकलापके अतिरिक्त जो कुछ किया जाये वह या तो इस गतिके अंगके रूपमें या फिर इस तरह किया जाय जैसे वह सत्ताकी बाहरी सीमाके बाहर है और भीतरी गतिविधिको अस्तव्यस्त नहीं कर सकता और दिनकी सभी चीजोंका उपयोग प्रगतिके लिये किया जाय।

और अगर तुम सवेरे मेरे पास आओ तो यह रूढ़िगत प्रथाको पूरा करनेके लिये न हो, तुम्हारी अंतरात्मा और तुम्हारा मन ग्रहण करनेके लिये तैयार हो। अगर इस समय तुम मेरी बात सुन रहे हो, अगर यह सिर्फ तुम्हारी मानसिक रुचिको संतुष्ट करनेवाली चीज है तो मेरा चुप रहना ही ज्यादा ठीक होगा। लेकिन अगर यह कहींपर आंतरिक सत्ताको छूता है तभी इस दिनका कुछ उपयोग या उद्देश्य है और ध्यान भी ऐसी अवस्थामें करना चाहिए कि अगर कोई निर्णायक चीज न भी उतरे तो भी कुछ अंदर रिस कर तो जा ही सके जिसका परिणाम बादमें आये।

हमारे योगकी दृष्टिसे १५ अगस्तका एक अर्थ यह भी है। रही बात कामका लेखा-जोखा देखनेकी, यह जाननेकी कि तुम कहां हो और कितना काम हो गया तो इस बारेमें कुछ बातें याद रखनी जरूरी हैं। तुम उन्हें मनसे जानते हो।

यह याद रखो कि अन्य योगोंके उद्देश्य हमारे लिये पहली अवस्थाएं या पहली शर्तें ही हैं। पहलेकी पद्धतियोंमें लोग ब्रह्मचेतना या वैश्व चेतनाका अनुभव पाकर या प्रकाश और शक्तिके अवतरण अथवा अनंतकी सूचना पाकर ही संतुष्ट हो जाते थे।

इतना काफी मान लिया जाता था कि मनको कुछ आध्यात्मिक अनुभूतियां हों और उसका आंशिक रूपांतर हो और प्राणका उसके साथ संबंध हो।

वे किसी स्थिर स्थितिकी खोज करते थे, मुक्ति उनका अंतिम लक्ष्य था। यह सब प्राप्त करनेके लिये, अनंत और वैश्व शक्तिकी ओर खुलनेके लिये, उसकी सूचनाएं पाने और उसका पूरा अनुभव करनेके लिये अहंके परे जाना, वैश्व मन, वैश्व आत्मा, विश्व पुरुषका अनुभव करना तो केवल पहली शर्त है।

हमें इस महत्तर चेतनाको सीधा प्राणिक सत्ता और भौतिक सत्तामें उतारना है ताकि परम अचंचलता और पूर्ण वैश्व भाव पूरी तरहसे, शिखरसे लेकर तलीतक आ जाय। अगर इतना

न हो तो रूपांतरकी पहली शर्त पूरी नहीं होती।

दूसरी चीज जिसे हमें जानना और याद रखना है यह है कि कोई भी चीज तबतक पूर्णतया नहीं की जा सकती जबतक सब कुछ पूर्णतया न कर लिया जाय। इतना काफी नहीं है कि मन और प्राण तो खुल जाएं और भौतिक अंधकारमें पड़ा रहे।

इसी तरह मनका रूपांतर तबतक नहीं हो सकता जबतक प्राणका रूपांतर न हो जाय और अगर प्राणिक सत्ताका रूपांतर न हो जाय तो कोई भी प्राप्ति नहीं हो सकती क्योंकि प्राणिक सत्ता ही प्राप्त करती है। अगर मन केवल अंशतः बदले और प्राणिक सत्ता भी खुले और अंशतः बदल जाय तो यह हमारे प्रयोजनके लिये काफी नहीं है क्योंकि सारा-का-सारा प्राणिक क्षेत्र तबतक नहीं बदल सकता जबतक कि भौतिक भी पूरी तरह न खुले और रूपांतरित हो क्योंकि दिव्य प्राण अपने-आपको एक अयोग्य वातावरणवाले जीवनमें चरितार्थ नहीं कर सकता।

और अगर बाहरी मनुष्य न बदले तो आंतरिक भौतिक सत्ताका बदलना भी काफी नहीं है। योगकी इस पद्धतिमें एक पूर्ण समग्रता है और सब कुछ सबपर निर्भर है। कहींपर रुक जाना अगले जीवनके लिये तैयारी हो सकती है, विजय नहीं। किसी भी चीज-के स्थायी तौरपर बदलनेके लिये जरूरी है कि सब कुछ बदले। याद रखने लायक तीसरी चीज यह है कि अगर सब कुछ बदलना है तो उसके लिये संपूर्ण समर्पण जरूरी है।

इसका अर्थ यह है कि सत्तामें कहींपर कोई चीज बचाकर न रखी जाय, पुराने रूढ़िगत विचारोंसे और मानव तौर-तरीकोंसे कोई समझौता न हो। जहां कहीं कोई चीज बचाकर रखी जाती है उसका अर्थ होता है कि सत्यको स्वीकार नहीं किया गया और हम फिरसे आंशिक प्राप्ति और रूपांतरकी भूलको दोहराएंगे। हमें अज्ञानकी लीलाके लिये कोई क्षेत्र न छोड़ना चाहिए।

हमारे लिये सत्य और मिथ्यात्वके बीच, परा और अपरा प्रकृति-

के बीच कोई समझौता न होना चाहिए। इन बातोंको याद रखते हुए हमें अपने कामका लेखा-जोखा देखना चाहिए। यह देखो कि कितना कुछ करना बाकी है लेकिन निराशाके भावके साथ नहीं क्योंकि रास्ता बहुत लंबा और कठिन है, यह एक चमत्कारके रूपमें पूरा नहीं किया जा सकता। इसे एक महान् और पूर्ण गति द्वारा ही पूरा किया जा सकता है। तुम्हें हर कदमको एक चिह्न, एक प्रोत्साहनके रूपमें मानना चाहिए, यह परात्परकी ओर एक कदम है। एक ओर विजय प्राप्तिके लिये दृढ़ प्रतिज्ञा और उत्साहकी कमी न हो, दूसरी ओर उतावली, अधीरता, अवसाद न आयें। रहे बस भागवत इच्छाकी निश्चितिका यह भाव, यह संकल्प, "तेरी इच्छा हमारे अंदर पूर्ण होगी" और यह अभीप्सा कि "यह हमारे अंदर पूर्ण हो ताकि यह जगत्के अंदर पूर्ण हो सके।"

१५ अगस्त १९२६को श्रीअरविंदके साथ बातचीत

शिष्य—इस बार आप हमारे प्रयासकी सफलताके बारेमें क्या कहेंगे? पिछली बार आपने कहा था कि आप उसके बारेमें निश्चित थे।

श्रीअरविंद—मैंने यह नहीं कहा कि मैं निश्चित हूं। चलो 'क'से इस बारेमें पूछें।

एक और शिष्य—(पहलेसे) तुम इस तरह क्यों पूछ रहे हो? पिछली बारकी बात उठाये बिना ही अपनी बात पूछ लो न।

शिष्य—इस समयकी सामान्य परिस्थितिको देखते हुए क्या आप कह सकते हैं कि आपको विश्वास है या नहीं?

श्रीअरविंद—हमें विश्वास है भी और नहीं भी।

शिष्य—यह कैसे?

श्रीअरविंद—मैं कह सकता हूं कि मैं नैतिक रूपसे निश्चित हूं परंतु व्यावहारिक रूपसे नहीं। मैं व्यावहारिक रूपसे निश्चित नहीं हूं क्योंकि भौतिक जगत्को कोई पश्चात्ताप नहीं है। सबसे बड़ी

वाधा जो शायद अलंघ्य हो, जड़-भौतिक जगत्का रोड़ा है।

शिष्य—पश्चात्ताप नहीं है से आपका क्या मतलव है?

श्रीअरविंद—पश्चात्ताप नहीं है का मतलव है जड़ जगत् भगवान् या भागवत जीवनके लिये तनिक भी परवाह नहीं करता।

शिष्य—जड़ भौतिक जगत्के प्रतिरोधसे आपका क्या मतलव है?

श्रीअरविंद—उसकी किसी उच्चतर चीजकी ओर खुलनेकी असंभावना और वह जिसके लिये अभ्यस्त है उससे जरा भी भिन्न सोचनेकी अक्षमता। मेरा मतलव मनुष्यकी मूढ़ता और उसके अंधेपनसे है। जब मैं जड़ भौतिकके प्रतिरोधकी वात करता हूं तो मेरा मतलव वाहरी जड़-भौतिकसे नहीं वल्कि सूक्ष्म जड़से होता है। सूक्ष्म और वाह्य जड़ होता है और जब मैं कहता हूं कि जड़ भौतिक अभेद्य है तो मेरा मतलव यह होता है। सूक्ष्म जड़ने सत्यको स्वीकारा नहीं है, जड़-भौतिक मनने उच्चतर सत्यको नहीं स्वीकार किया है। भौतिक शक्तिके कोषाणुओंमें एक अपनी चेतना होती है और उस चेतनाको अपने-आपको सत्यकी ओर खोलना चाहिए। लेकिन जड़-भौतिक मन रूपांतरकी दिव्य संभावनापर विश्वास नहीं करता और जैसा कि मैंने कहा हमारे लिये जवतक सब कुछ न हो जाये तवतक कुछ नहीं हुआ।

शिष्य—और आप नैतिक दृष्टिसे निश्चित कैसे हैं?

श्रीअरविंद—क्योंकि मैं अधिकाधिक शक्तिको भौतिकमें उतरते हुए देखता हूं और भौतिक सत्ता जागरणके लक्षण दिखा रही है।

शिष्य—लेकिन हम जानते हैं कि एक वार मन सत्यको स्वीकार कर ले तो वह उसका दवाव प्राणिक सत्तापर डालता है और उसे उच्चतर सत्यके लिये खोलता है और जव प्राण खुल जाय तो वह भौतिक सत्तापर दवाव डालता है। तो अव जव कि आप कह रहे हैं कि शक्ति भौतिक स्तरपर उतर रही है तो इसका मतलव यह हुआ कि वह अपने समयमें इस प्रतिरोधको जीत लेगी और वाकी स्वाभाविक रूपसे होता चलेगा।

श्रीअरविंद—जरूरी नहीं है कि वह चले ही।

शिष्य—मान लीजिये कि जड़ सत्ता नहीं बदलती?

श्रीअरविंद—अगर वह न बदले तो वह एक अलंघ्य बाधा बन जायगी।

शिष्य—क्या जड़ तत्त्वके विरोधके सिवा कोई और बाधा नहीं है?

श्रीअरविंद—नहीं, नहींके बराबर।

शिष्य—क्या इसका यह मतलब हुआ कि आसुरी शक्तियोंकी ओरसे कोई बाधा न आयेगी। मेरा मतलब आसुरिक प्राण लोकसे नहीं है बल्कि असुरकी सहायतासे आनेवाली भौतिक बाधाओंसे है।

श्रीअरविंद—हां, जड़ तत्त्वके इस सारे प्रतिरोधके पीछे आसुरी सहायता होती है लेकिन अगर स्वयं जड़ तत्त्व ही झुक जाय तो उन शक्तियोंका कोई मूल्य न रहेगा। मेरा मतलब यह नहीं है कि उनकी ओरसे कोई कठिनाई नहीं आयेगी, मेरा मतलब यह कि वह गौण रह जायगी।

शिष्य—प्रतिरोधपर विजय पानेके लिये क्या शर्तें हैं, क्या उन्हें पूरा करनेके लिये हमारा भी कुछ दायित्व है?

श्रीअरविंद—शर्तें! यह कहना तो बहुत कठिन है (कुछ ठहर कर) और अगर मैं कहूं भी तो तुम समझ न पाओगे।

शिष्य—कहिये न। हम समझनेकी कोशिश करेंगे।

श्रीअरविंद—शर्त यह है कि मनुष्य सीधा देव लोकके साथ नाता जोड़ सके। यह तभी संभव होगा।

शिष्य—मैं तो कुछ भी न समझ पाया। आपको एक-एक शब्द समझाना होगा।

श्रीअरविंद—मैंने यही तो कहा था।

शिष्य—आपका मतलब निचले या उच्चतर देवोंसे है?

श्रीअरविंद—मेरा मतलब देवोंसे है, प्राणिक या मानसिक देवोंसे नहीं।

शिष्य—लेकिन अगर सूक्ष्म भौतिक उच्चतर सत्यको स्वीकार कर ले?

श्रीअरविंद—मेरे दृष्टांतमें तो उसन स्वीकार कर लिया होगा लेकिन इससे कुछ भी प्रमाणित नहीं होता। इसका यह अर्थ नहीं होता कि वह वैश्व सूक्ष्म भौतिकमें प्रतिष्ठित हो गया है या आधार-भूत, मौलिक रूपसे बदल गया है।

शिष्य—क्या पूरा भौतिक उसके आगे न झुकेगा?

श्रीअरविंद—तर्ककी दृष्टिसे तो यह निश्चित है पर व्यावहारिक दृष्टिसे नहीं।

शिष्य—तो क्या उसकी वृत्तिमें परिवर्तनके कोई चिह्न नहीं हैं?

श्रीअरविंद—नहीं; अभीतक परिवर्तनके कोई निर्णायक चिह्न नहीं हैं लेकिन चूंकि भौतिकमें अधिकाधिक शक्तिका अवतरण हो रहा है इसलिये मैं कह सकता हूं कि नैतिक दृष्टिसे मुझे भरोसा है कि जड़ तत्त्व भी बदलेगा।

शिष्य—लेकिन अगर जड़ तत्त्वके नियम बदल जाएं तो क्या यह नहीं कहा जा सकता कि जड़ जड़ न रहेगा।

श्रीअरविंद—क्यों?

शिष्य—क्योंकि जड़ तत्त्व अमुक नियमोंसे बना है।

श्रीअरविंद—नियमोंसे तुम्हारा क्या मतलब है? जिन्हें तुम नियम कहते हो वे केवल आदतें हैं, अगर तुम अपनी आदतें बदल डालो तब भी तुम तुम ही रहोगे।

शिष्य—क्या कुछ लोग अपनी साधनाद्वारा जड़ जगत्‌के नियमोंको नहीं बदल सकते?

श्रीअरविंद—हम बाहरी जड़ सत्ताको नहीं बदलना चाहते। केवल अमुक लोगोंमें जहां मनुष्य उच्चतर शक्तिके प्रति खुला हुआ है, यह परिवर्तन होगा, हर एकमें नहीं।

शिष्य—क्या समस्त मानव जातिकी वृत्ति इस बारेमें सफलता या असफलताका कारण हो सकती है?

श्रीअरविंद—निश्चय ही उसका कुछ मूल्य तो है ही लेकिन इसका इस मामलेमें बहुत बड़ा असर नहीं होता।

शिष्य—भौतिक मन और जड़ मनमें क्या फर्क है ?

श्रीअरविंद—जड़ भौतिक मनका एक हिस्सा है।

शिष्य—और भौतिक क्या है ?

श्रीअरविंद—चूंकि मेरे अंदर इस विषयकी प्रेरणा नहीं है इसलिये मैं 'क'से समझानेके लिये कहूंगा (कुछ ठहर कर) मैंने भौतिकमें चार चीजोंके वारेमें कहा था १) भौतिक मन २) भौतिक प्राण ३) स्वयं जड़ द्रव्य और ४) भौतिकमें अतिमानस।

हम कह सकते हैं कि भौतिक मन मनका वह छोर है जो भौतिक जगत्के संपर्कमें आता है। वह जड़ तत्त्वद्वारा सीमित मन है जो विचारोंकी सहायताके बिना काम करता है, वह जगत्के केवल भौतिक पहलूको देखता है और चीजोंको जैसी वे हैं, वैसी ही मान लेता है, वह उस दृष्टिके परे नहीं जाता। वह बाहरी जगत्के ज्ञान या भौतिक जगत्के ज्ञान या लक्ष्यपर निर्भर रहता है। वह इन्द्रियोंकी साक्षीपर निर्भर रहता है।

भौतिक प्राण है भौतिक शरीरसे सीमित प्राण। यह स्नायु संस्थानमें गति करता हुआ प्राण है। यह भौतिक शरीरके विना नहीं रह सकता। यह शुद्ध प्राणिक सत्तासे और उसकी सापेक्ष स्वाधीनतासे एकदम अलग है, यह जड़-भौतिक नियमोंके अधीन प्राण है परंतु यह जीवनी शक्ति नहीं है। जीवनी शक्ति जड़ तत्त्वसे एकदम भिन्न वस्तु है। यह जड़ द्रव्यके विषयोंके अधीन जीवन है। जड़ द्रव्यमें भी महान् शक्ति है लेकिन यह जीवनी-शक्ति नहीं है। जीवनी शक्ति जड़ भौतिक जगत्से एकदम अलग है। वह स्वयं अपने लिये अपने-आपसे अस्तित्व रखती है और अपने-आपको जड़ परिस्थितियोंमें बांधकर नहीं रखती। प्राणके लिये कोई भी चीज, चाहे वह कितनी भी काल्पनिक या मूर्खतापूर्ण क्यों न हो, असंभव नहीं मालूम होती। वह प्राणकी भव्य महानता ही थी जिसके कारण नेपोलियनने कहा था, "कोई चीज असंभव नहीं है, 'असंभव' शब्दको शब्दकोशसे निकाल देना

चाहिये।" नेपोलियनके द्वारा प्राणमय पुरुष बोल रहा था। यह सच है कि प्राणलोक किसी चीजको असंभव नहीं मानता। वह भौतिक जगत्की तरह उच्चतर संभावनाओंको अस्वीकार नहीं करता।

अब आता है शुद्ध जड़ जगत्। इसे यूरोपीय लोग निश्चेतना कहते हैं लेकिन वे जिस जड़ पदार्थको निश्चेतना कहते हैं उसमें जबर्दस्त शक्ति होती है। वस्तुतः हमारे प्रयासमें वही निर्णायक शक्ति होगी। अगर यह इस बार न किया जा सके तो इसे किसी और दिन करना होगा,—किसी और समय।

शिष्य—यह तो स्पष्ट है कि जड़ पदार्थमें बहुत ऊर्जा होती है।

एक और शिष्य—जड़ पदार्थ और ऊर्जा एक ही हैं?

श्रीअरविंद—यह केवल एक पहलू है जिसे वैज्ञानिक जानते हैं।

शिष्य—अगर परमाणुको तोड़ा जाय तो उसमेंसे इतनी शक्ति निकलेगी जो कुछ वैज्ञानिकोंके मतानुसार सारे जगत्को समाप्त कर देगी। किसी पदार्थमें परमाणुओंका स्थान बदल देनेसे ही पदार्थके गुण एकदम बदल जाएंगे। क्या आप जिस ऊर्जाकी बात कर रहे हैं वह उसी ऊर्जाका एक रूप है जिसकी बात वैज्ञानिक करते हैं?

श्रीअरविंद—हां, लेकिन वह जो जानते हैं वह उसका एक पहलू भर है क्योंकि उसमें केवल शक्ति ही नहीं होती, उसकी अपनी चेतना भी होती है, वह चीजको स्वीकार और अस्वीकार कर सकती है।

जड़ पदार्थ मन्द, निश्चेतन होता है। वह बदलना नहीं चाहता। वह कोई चीज प्रतिष्ठित नहीं करना चाहता। वह सभी भौतिक अवस्थाओंमें एक-सा रहता है और जड़ पदार्थके नियमोंका अनुसरण करता है। अभीतक जड़ पदार्थमें जो थोड़ा-सा परिवर्तन आया है उसे लानेमें ही प्रकृतिको हजारों वर्ष लग गये हैं और उसमें किसी ऊपरसे आनेवाली मन या प्राणकी शक्तिका असर है, स्वयं जड़ भौतिकमें निहित शक्ति, सामर्थ्य या स्वीकृतिका नहीं।

जब प्राणने जड़ भौतिकपर दबाव डालना शुरू किया तो वह अपने

संभव असंभवके विचारको वहांतक नहीं ले जा सका, उसने जड़ पदार्थके साथ एक तरहका समझौता कर लिया और उसे भौतिकके जीवनकी सीमाओंको स्वीकार करना पड़ा।

शिष्य—आपने कहा कि जड़ भौतिकके प्रतिरोधपर विजय पाना संभव हो सकता है यदि हम सीधा देवलोकके साथ संबंध बना सकें। क्या इसकी कोई प्रक्रिया है, क्या वह अपने-आप आता है या उसे कोई उच्चतर शक्ति ले आती है?

श्रीअरविंद—उसके लिये तुम्हें पहले अपने अंदरकी यूरोपीय मानसिकतासे पिंड छुड़ाना होगा। तुम सभी अपने मनमें आधे यूरोपीय हो। मनके परे जाने और वस्तुओंपर मानव दृष्टिसे देखने-की आदत छोड़नेके लिये एक निश्चित फैसलेकी जरूरत होती है। तुम्हें दो परस्पर विरोधी भूलोंसे, प्राणिक शक्तियोंको सच्चे देवता मानने और जड़वादी मनोवृत्तिको स्वीकार करनेसे बचना चाहिए।

शिष्य—लेकिन आपने कहा था कि सभी निर्णय यहां जगत्में चरितार्थ होनेसे बहुत पहले ऊपर ही लिये जाते हैं।

श्रीअरविंद—हां, उनके यहां होनेसे बहुत पहले।

शिष्य—तब तो इस बारेमें निश्चय पहले ही हो चुका होगा कि सत्य भौतिक स्तरपर सफल होगा या नहीं।

श्रीअरविंद—हो सकता है लेकिन हो सकता है कि वह तुम्हें बतलाया न जाय। तुम्हें अज्ञानके क्षेत्रमें ही काम करना होगा। कौन कह सकता है? हमें पता नहीं।

शिष्य—अगर हमें निर्णयका पहलेसे पता हो तो सारा रस जाता रहेगा।

श्रीअरविंद—अज्ञान आशीर्वाद है।

शिष्य—उत्तम पुरुष बहुवचनको भले पता न हो, मैं उत्तम पुरुष एकवचनके बारेमें पूछ रहा हूं।

शिष्य—अगर निश्चय हो चुका है तो यह भी ठीक हो चुका होगा कि इस बार सफलता मिलेगी या नहीं।

श्रीअरविंद—निश्चय, कहां ?

शिष्य—वहां (ऊपर)।

श्रीअरविंद—मैं कह सकता हूं क्योंकि मैं वहांके निश्चयको जानता हूं और इस बातमें तनिक संदेहकी छायातक नहीं है कि एक दिन सफलता अवश्य मिलेगी। प्रश्न इतना ही है कि क्या सफलता हमारे द्वारा, हमारे प्रयासोंसे मिलेगी।

शिष्य—अगर इस बार सफलता न मिले तो क्या ज्योति लौट जायेगी ?

श्रीअरविंद—वह लौट भी सकती है और प्रतीक्षा भी कर सकती है। प्रश्न यह है कि क्या भौतिक जगत् ज्योतिको स्वीकार करनेके लिये तैयार है ? आजतक जब कभी सत्य आया है तो भौतिकने उसे स्वीकार नहीं किया।

शिष्य—जब आप कहते हैं कि यूरोपीय मन जड़वादी होता है तो इसका क्या मतलब होता है ?

श्रीअरविंद—यूरोपीय जड़वादसे हमारा मतलब है वह मनोवृत्ति जो जड़ भौतिकको विकासका आधार मानकर चलती है और वह जिस चीजकी अभ्यस्त नहीं है उसे माननेसे इंकार करती है।

मैं यूरोपीय मनकी निन्दा नहीं कर रहा, वह अपने तरीकेसे बहुत अच्छा है, लेकिन हम भौतिक सत्तामें एक निर्णायक परिवर्तन लानेकी कोशिश कर रहे हैं। यूरोपियन इसमें उल्टी भूल भी करते हैं, ऐसे यूरोपीय जो ऐसे जड़वादी सूत्रको माननेसे इंकार करते हैं जो मनको भौतिकसे बांधे रखना चाहता है, उसके बदले वे प्राणिक शक्तियोंको सच्चे देवोंके रूपमें मानते हैं। उदाहरणके लिये ऐसे लोग जो अतीन्द्रिय शोध, स्वतः लेख, अतीन्द्रिय संचार, माध्यमोंद्वारा परीक्षण करते हैं।

शिष्य—क्या आपका कहना है कि भौतिक नियम भी बदल जाएंगे ?

श्रीअरविंद—नियमसे तुम्हारा क्या मतलब है ? जो नियम कहलाते हैं वे बहुधा भौतिकके अभ्यास होते हैं। मैं पहले ही बता चुका हूं।

शिष्य—क्या मानव शरीर बदलनेके लिये बाधित होगा ?

श्रीअरविंद—यह जरूरी नहीं है कि उसे बदलना पड़े। इसमें भौतिक क्रियाओंकी संभावनाओं और क्षमताओंमें फर्क आ सकता है। इसका मतलब वैश्व भौतिकमें परिवर्तनसे नहीं है। यह केवल उन्हीं लोगोंमें होगा जो उच्चतर शक्तिकी ओर खुले हुए हैं। अगर अभेद्यों-का भेदन हो जाय तो यह एक चमत्कार होगा।

शिष्य—आज विज्ञानकी खोजें कम चमत्कारपूर्ण नहीं हैं।

श्रीअरविंद—जड़ भौतिक मनको चमत्कारोंकी जरूरत होती है। वह भूतकालके चमत्कारोंपर विश्वास करता है, भविष्यके चमत्कारोंपर नहीं। वह संतुष्ट तब होता है जब चमत्कार अभ्यासगत हो जाते हैं।

स्वप्न और सिद्धियां

१५ अगस्त १९४७—स्वाधीन भारतको श्रीअरविंदका संदेश

१५ अगस्त स्वाधीन भारतका जन्मदिन है। यह दिन भारतके लिए पुराने युगकी समाप्ति और नये युगका प्रारंभ सूचित करता है। परंतु इसका महत्त्व हमारे लिए ही नहीं, वल्कि एशिया और संपूर्ण संसारके लिए भी है; क्योंकि यह राष्ट्रोंकी बिरादरीमें एक नयी शक्तिके प्रवेशका सूचक है जिसमें अवर्णनीय संभावनाएं हैं और जिसे मानवजातिके राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक भविष्यके निर्धारणमें एक वड़ी भूमिका निभानी है। व्यक्तिगत रूपमें मेरे लिए यह स्वभावतः प्रसन्नताकी बात है कि इस दिनने, जो केवल मेरे लिए ही महत्त्वपूर्ण था क्योंकि यह मेरा जन्मदिन है जिसे जीवन-संवंधी मेरी शिक्षाको माननेवाले लोग प्रतिवर्ष मनाते हैं, यह विशाल अर्थ तथा महत्त्व प्राप्त कर लिया है। एक गुह्यवेत्ताके रूपमें मैं, अपने जन्मदिनके भारतीय स्वाधीनता-दिवसके साथ इस प्रकार एक हो जानेको कोई दैवयोग या आकस्मिक संयोग नहीं मानता वल्कि यह मानता हूं कि जिस कार्यको लेकर मैंने अपना जीवन आरंभ किया था उसे मेरा प्रथ-प्रदर्शन करनेवाली भागवत शक्तिने अपनी अनुमति दे दी है और उसपर अपनी मुहर भी लगा दी है। निःसंदेह, आजके दिन मैं प्रायः उन सभी जागतिक आन्दोलनोंको, जिन्हें मैंने अपने जीवनकालमें ही सफल होते देखनेकी आशा की थी, पर जो उस समय असंभव स्वप्न-जैसे ही दिखाई देते थे, सफलताके निकट पहुंचते देख सकता हूं या फिर उनका समारंभ हो गया है और वे अपनी सफलताकी ओर वढ़ रहे हैं।

इस महान् अवसरपर मुझसे संदेश देनेकी प्रार्थना की गई है, पर शायद मैं संदेश देनेकी स्थितिमें नहीं हूं। मैं वस इतना ही

कर सकता हूं कि उन लक्ष्यों और आदर्शोंकी व्यक्तिगत घोषणा कर दूं जिन्हें मैं अपनी बाल्यावस्था और यौवनसे पोसता आया हूं और जिनकी पूर्तिको मैं अब आरंभ होते देख रहा हूं, क्योंकि वे भारतकी स्वाधीनतासे संबद्ध हैं और उस कार्यके अंग हैं जिसे मैं भारतका भावी कार्य मानता हूं और जिसमें वह प्रमुख स्थान लिए बिना नहीं रह सकता। वस्तुतः मेरा हमेशासे ही यह विश्वास रहा है और मैंने हमेशा यह कहा भी है कि भारत केवल अपने भौतिक हितोंकी सिद्धिके लिए, विस्तार, महानता, शक्ति और समृद्धि पानेके लिए नहीं उठ रहा,—यद्यपि इनकी भी उसे उपेक्षा नहीं करनी होगी,—और निश्चय ही वह दूसरोंकी तरह अन्य देशोंपर आधिपत्य जमानेके लिए भी नहीं उठ रहा, बल्कि वह उठ रहा है सारी मनुष्यजातिके सहायक और नेताके रूपमें परमेश्वर और जगत्के हितके लिए। वे लक्ष्य और आदर्श अपने स्वाभाविक क्रममें ये थे: एक क्रांति जो भारतकी स्वाधीनता और एकता संपन्न करे; एशियाका पुनरुत्थान तथा स्वातन्त्र्य और उसका उस महान् भूमिकाको फिरसे प्राप्त करना जो उसने मानव सभ्यताकी उन्नतिमें निभायी थी; मानवजातिके लिए एक नये, अधिक महान्, उज्ज्वल और श्रेष्ठ जीवनका उदय जो अपनी संपूर्ण चरितार्थताके लिए बाहरी तौरपर राष्ट्रोंकी पृथक् सत्ताके अंतर्राष्ट्रीय एकीकरणपर आधारित होगा, उनके राष्ट्रीय जीवनको सुरक्षित और सुदृढ़ करेगा पर उन्हें एक दूसरेके पास लाकर सबपर अभिभूत करनेवाली एकताका रूप दे देगा; भारतके द्वारा अपने आध्यात्मिक ज्ञानका और जीवनको आध्यात्मिक बनानेके साधनोंका सारी जातिको दान देगा और अंतमें, क्रमविकासमें एक नया कदम उठायेगा जो चेतनाको उच्चतर स्तरपर उठाकर जीवनकी उन अनेक समस्याओंका हल करना प्रारंभ कर देगा जिन्होंने मनुष्यजातिको तभीसे हैरान और परेशान कर रखा है जबसे मनुष्योंने वैयक्तिक पूर्णता और पूर्ण समाजके विषयमें सोचना और स्वप्न देखना शुरू किया था।

भारत स्वाधीन हो गया है पर उसने एकता प्राप्त नहीं की, पाई है केवल टूटी-फूटी स्वतंत्रता। एक समय प्राय: ऐसा दीखता था मानों वह शायद फिरसे पृथक्-पृथक् राज्योंकी उस अव्यवस्थापूर्ण स्थितिमें जा गिरेगा जो ब्रिटिश विजयसे पहले विद्यमान थी। भाग्यवश अब ऐसी प्रबल संभावना उत्पन्न हो गई है कि इस प्रकारका संकटपूर्ण पुन:पतन टल जायगा। संविधान-सभाकी बुद्धिमत्तापूर्ण उग्र नीतिने इस बातको संभव बना दिया है कि दलित वर्गोंकी समस्या बिना फूट-फटावके हल हो जायगी। परंतु हिंदुओं और मुसलमानों-का पुराना सांप्रदायिक भेद देशके स्थायी राजनीतिक विभाजनके रूपमें सुदृढ़ हो गया दीखता है। यह आशा करनी चाहिए कि कांग्रेस और राष्ट्र तय किये गये इस विभाजनको सदाके लिए निर्णीत नहीं मान लेंगे, वे इसे एक कामचलाऊ अस्थायी उपायसे अधिक कुछ न समझेंगे। क्योंकि यदि यह बना रहा तो भारत भयानक रूपमें दुर्बल और अपंगतक हो सकता है; गृह-कलहका होना सदा ही संभव बना रह सकता है, नये आक्रमण और विदेशी राज्यका हो जाना तक संभव हो सकता है। देशके विभाजनको मिटना ही होगा,—हम आशा करें कि तनावके ढीले पड़नेसे, शांति और मेल-मिलापकी आवश्यकताको उत्तरोत्तर अधिक समझते जानेसे, साझे और संयुक्त कार्यकी और यहांतक कि इस प्रयोजनके लिए ऐक्यके किसी साधन-की भी सतत आवश्यकता अनुभव करनेसे यह विभाजन दूर हो जायगा। इस प्रकार एकता चाहे किसी भी रूपमें आ सकती है —उसके ठीक-ठीक रूपका व्यावहारिक महत्त्व भले ही हो, कोई आधारभूत महत्त्व नहीं है। परंतु चाहे किसी भी उपायसे हो, विभाजनको मिटना ही होगा और वह मिटकर रहेगा। क्योंकि ऐसा हुए बिना भारतका भविष्य भयानक रूपसे कुंठित, यहांतक कि विफल भी हो सकता है। परंतु ऐसा बिल्कुल नहीं होगा।

एशिया जग गया है और उसके बड़े-बड़े भाग स्वतंत्र हो गये हैं या इस समय बंधन-मुक्त हो रहे हैं, इसके अन्य भाग जो अभी पर-

तंत्र हैं, कैसे भी संघर्षोंमेंसे क्यों न हो, स्वतंत्रताकी ओर बढ़ रहे हैं। केवल थोड़ा ही करना बाकी है और वह आज न सही कल पूरा हो जायेगा। उसमें भारतको अपनी भूमिका निभानी है और उसे उसने ऐसी सामर्थ्य और योग्यताके साथ करना शुरू कर दिया है जो अभीसे उसकी संभावनाओंकी मात्राको तथा उस स्थानको सूचित करती है जिसे वह राष्ट्रोंकी सभामें ग्रहण कर सकता है।

मानवजातिका एकीकरण प्रगतिके पथपर है, चाहे है अभी अधूरे प्रारंभके रूपमें ही, वह संगठित तो किया जा चुका है पर वह बड़ी भारी कठिनाइयोंके विरुद्ध संघर्ष कर रहा है। लेकिन उसमें बल और वेग है और, यदि इतिहासके अनुभवको मार्गदर्शक माना जा सके तो, वह अनिवार्य रूपसे बढ़ता चला जायगा और अंतमें विजयी होगा। इस कार्यमें भी भारतवर्षने प्रमुख भाग लेना प्रारंभ कर दिया है और, यदि वह उस विशालतर राजनीतिज्ञताको विकसित कर सके जो वर्तमान घटनाओं और तात्कालिक संभावनाओंसे ही सीमित नहीं होती, बल्कि भविष्यमें पैठकर उसे देख लेती और निकट ले आती है, तो इस क्षेत्रमें भारतकी उपस्थिति यह दिखा सकती है कि मन्द एवं भीरुतापूर्ण विकास और द्रुत एवं साहसपूर्ण विकासमें कितना अधिक भेद है। जो कार्य किया जा रहा है उसमें महान् विपत्ति आ सकती है और वह उसमें बाधा डाल सकती या उसे नष्ट कर सकती है किंतु फिर भी अन्तिम परिणाम निश्चित है। क्योंकि, चाहे जो हो, एकीकरण प्रकृतिके विकासक्रममें एक आवश्यक क्रिया है, अनिवार्य गति है और उसकी उपलब्धिकी सुरक्षित रूपसे भविष्य-वाणी की जा सकती है। राष्ट्रोंके लिए भी इसकी आवश्यकता स्पष्ट है, क्योंकि इसके बिना छोटे-छोटे राष्ट्रोंकी स्वाधीनता भविष्यमें कभी भी सुरक्षित नहीं रह सकती और बड़े तथा शक्तिशाली राष्ट्र भी वास्तवमें सुरक्षित एवं निश्चित नहीं रह सकते। स्वयं भारत भी यदि विभक्त रहा तो अपनी सुरक्षाके बारेमें निश्चित रूपसे आश्वस्त नहीं रहेगा। अतएव एकीकरण सिद्ध होना सबके

हितकी बात है। केवल मानवीय अशक्तता एवं मूर्खतापूर्ण स्वार्थ-परता ही उसे रोक सकती है। इसके विरुद्ध तो, कहा गया है कि, देवताओंका प्रयत्न भी वृथा जाता है; परंतु यह भी प्रकृतिकी आवश्यकता और भगवान्की इच्छाके विरुद्ध हमेशा नहीं ठहर सकती। एकीकरणके साधित हो जानेपर राष्ट्रवाद पूर्णरूपसे चरितार्थ हो जायेगा; तब अंतर्राष्ट्रीय भावना और दृष्टि भी अवश्य विकसित होगी और अंतर्राष्ट्रीय पद्धति तथा संस्थाएं भी। यहांतक कि यह भी संभव है कि इस परिवर्तनकी प्रक्रियामें ऐसी प्रगतियां भी दिखाई दें जैसी कि दो या अनेक देशोंका एकसंग नागरिक होना, संस्कृतियों-का स्वेच्छापूर्वक घुलना-मिलना आदि, और राष्ट्रीयताकी भावना अपनी युद्धप्रियता छोड़ इन चीजोंको अपनी दृष्टिकी अखंडताके साथ पूर्णतया संगत अनुभव करे। एकताकी एक नई भावना मनुष्य जातिको अपने अधिकारमें कर लेगी।

संसारको भारतका आध्यात्मिक दान प्रारंभ हो चुका है। भारत-की आध्यात्मिकता यूरोप और अमरीकामें नित्य बढ़ती हुई मात्रामें प्रवेश कर रही है। यह आन्दोलन बढ़ेगा; वर्तमान कालकी विपदाओंके बीच अधिकाधिक लोगोंकी आंखें आशाके साथ भारतकी ओर मुड़ रही हैं और न केवल उसकी शिक्षाओंका बल्कि उसकी आंतरात्मिक और आध्यात्मिक साधनाका भी अधिकाधिक आश्रय लिया जा रहा है।

बाकी तो अभी एक व्यक्तिगत आशा है, एक विचार और आदर्श है जिसने भारत और पश्चिममें, दोनों जगह, दूरदर्शी विचारकोंको अपने वशमें करना शुरू कर दिया है। इस मार्गकी कठिनाइयां प्रयासके किसी भी अन्य क्षेत्रकी अपेक्षा बहुत अधिक जबर्दस्त हैं, परंतु कठिनाइयां जीती जानेके लिए ही बनी थीं और यदि 'परम इच्छाशक्ति'का अस्तित्व है तो वे अवश्य ही पराजित होंगी। यहां भी, यदि इस विकासको घटित होना है तो, चूंकि यह आत्मा और आंतिरक चेतनाकी अभिवृद्धि द्वारा ही होगा, इसका समारंभ भारत-

वर्ष ही कर सकता है और यद्यपि इसका क्षेत्र विश्वव्यापी होगा फिर भी केंद्रीय आन्दोलन भारत ही कर सकता है।

ये हैं वे भाव और भावनाएं जिन्हें मैं भारतीय स्वाधीनताकी इस तिथिके साथ संबद्ध करता हूं। क्या यह घटनाक्रम पूरा होगा या कहांतक या कितनी शीघ्र पूरा होगा यह बात इस नये और स्वाधीन भारतपर निर्भर करती है।

सभी संभव कठिनाइयोंके होते हुए भारत जरूर उठेगा इसका आश्वासन माताजी और श्रीअरविंद, दोनोंने बार-बार दिया है। माताजी और श्रीअरविंदने भारतके विभाजनको कभी नहीं स्वीकार किया। स्वाधीनता-प्राप्ति दिवसपर माताजीने एक प्रार्थना पढ़ी थी। यदि भारतवासी इस प्रार्थनाको हृदयसे दोहरा सकें तो भारत मांका उज्ज्वल भविष्य ज्यादा जल्दी आ सकेगा।

"हे हमारी मां! हे भारतकी आत्म-शक्ति! हे जननी! तूने कभी, अत्यंत अंधकारपूर्ण अवसादके दिनोंमें भी, यहांतक कि जब तेरे बच्चोंने तेरी वाणी अनसुनी कर दी, अन्य प्रभुओंकी सेवा की और तुझे अस्वीकार कर दिया, तब भी तूने उनका साथ नहीं छोड़ा। हे मां! आज, इस महान् घड़ीमें, जब कि वे जग पड़े हैं और तेरी स्वतंत्रताके इस उषःकालमें तेरे मुखमंडलपर ज्योति पड़ रही है, हम तुझे नमस्कार कर रहे हैं। हमें पथ दिखा जिसमें स्वतंत्रताका जो विशाल क्षितिज हमारे सामने उन्मुक्त हुआ है वह तेरी सच्ची महानताका तथा विश्वके राष्ट्र-समाजके अंदर तेरे सच्चे जीवनका भी क्षितिज बने। हमें पथ दिखा जिसमें हम सर्वदा महान् आदर्शोंके पक्षमें ही खड़े हों और अध्यात्म-मार्गके नेताके रूपमें तथा सभी जातियोंके मित्र और सहायकके रूपमें तेरा सच्चा स्वरूप मनुष्य-जातिको दिखा सकें।"

भौतिक जगत्‌में अवतरण

१९२६के आरंभसे ही श्रीअरविंदने आश्रमका उत्तरदायित्व माताजी-को सौंपना शुरू कर दिया। माताजी बाह्य रूपसे आश्रमके संचालन और आंतरिक रूपसे साधकोंके पथ-प्रदर्शनका काम अपने हाथमें लेने लगीं। २४ नवंबर वह ऐतिहासिक दिवस था जिसे आश्रमके इति-हासमें माताजी और श्रीअरविंदके जन्मदिनके बराबर महत्त्वपूर्ण माना जाता है। इसका संक्षिप्त-सा वर्णन पुराणीसे सुनिये जो स्वयं वहां उपस्थित थे :

"एकदम स्तब्ध नीरवता छाई हुई थी . . . कइयोंने ऊपरसे उतरते हुए प्रकाशके सागरको देखा। सभी उपस्थित लोगोंने सिरके ऊपर एक दबावका अनुभव किया। सारा वातावरण मानों बिजलीकी ऊर्जासे भरा था . . . धीमे-धीमे, गौरवमय पग रखती हुई माताजी पहले आयीं और उनके पीछे-पीछे राजोचित गरिमाके साथ श्रीअरविंद पधारे . . . माताजी उनके पास दाहिनी ओर एक छोटे-से मूढ़ेपर बैठ गयीं।

"चारों ओर नीरवता छाई थी, दिव्यताका सागर स्तब्ध खड़ा था। लगभग पैंतालीस मिनटका ध्यान हुआ, उसके बाद एक-एक करके शिष्योंने माताजीको प्रणाम किया।

"माताजी और श्रीअरविंद दोनोंने उन्हें आशीर्वाद दिया। माताजीके हाथके पीछे श्रीअरविंदका हाथ था, मानों वे माताजीके द्वारा आशीर्वाद दे रहे थे। आशीर्वादके बाद उसी नीरवतामें ध्यान हुआ। नीरव ध्यान और आशीर्वादके बीच कइयोंको स्पष्ट अनुभूतियां हुईं। सब कुछ समाप्त होनेपर लोगोंने अनुभव किया कि वे दिव्य स्वप्नसे जागे हैं। तब उन्हें इस समारोहके वैभव, उसके काव्य और उसके सौंदर्यका भान हुआ। देखनेमें तो यही लग रहा था कि इस अवसर-पर मुट्ठी भर शिष्य दिव्य गुरु और दिव्य जननीसे आशीर्वाद पा

रहे थे लेकिन यह उससे कहीं अधिक था। निश्चित रूपसे धरतीपर एक उच्चतर चेतनाका अवतरण हुआ था। उस गहरी नीरवतामें एक महान् आध्यात्मिक कार्यके वट-वृक्षकी कोंपलें फूटी थीं।

माताजी और श्रीअरविंद उठकर अंदर चले गये और उस नीरवतामें ही दत्ता (एक अंग्रेज शिष्या) ने अन्त:प्रेरणामें आकर घोषणा की: "आज प्रभु भौतिक तत्त्वमें अवतरित हुए हैं।"

अक्तूबर १९३५में श्रीअरविंदने इस अवसरके बारेमें लिखा था, "२४ नवंबर १९२६के दिन भौतिकमें श्रीकृष्णका अवतरण हुआ था। कृष्ण अतिमानसिक ज्योति नहीं हैं। कृष्णके अवतरणका मतलब है अधिमानसिक देवका अवतरण जो अपने-आप तो वास्तवमें अतिमानसिक नहीं हैं पर अतिमन और आनंदके अवतरणके लिये तैयारी कर रहे हैं। कृष्ण आनंदमय हैं, वे आनंदकी ओर अभिमुख विकासको अधिमानसके द्वारा सहारा देते हैं।"

हमारे प्रकाशन

माताजी और श्रीअरविंदके बारेमें :

बच्चोंके श्रीअरविंद—छोटे बच्चोंके लिए		रु. १.००
हमारी मां		रु. २.००
श्रीअरविंद और उनका आश्रम		रु. २.००
श्रीअरविंद—जीवन और दर्शन		रु. ६.००
माताजी—एक झलक		रु. १०.००
श्वेत कमल— माताजीका परिचय		रु. २०.००
लाल कमल—श्रीअरविंदका परिचय	अजिल्द	रु. ३०.००
	सजिल्द	रु. ३५.००
माताजी और श्रीअरविंद—दोनोंका परिचय		रु. २५.००
माताजी और श्रीअरविंद अपने बारेमें		रु. ३.००
१५ अगस्त (स्वप्न और सिद्धियां)—१५ अगस्तके बारेमें श्रीअरविंदके कुछ वार्तालाप		रु. ५.००
माताजीकी चित्रावली		रु. ४.००

शिक्षासंबंधी माताजी और श्रीअरविंदके लेख :

शिक्षाके आधार	रु. ५.००
शिक्षाके आयाम	रु. ६.००

श्रीअरविंदकी संस्कृत कृतियां :

सप्तचतुष्टय—साधनासंबंधी संस्कृत सूत्र और अंग्रेजी व्याख्याका अनुवाद, श्रीअरविंदका उपनिषद् और उनके मंत्र	रु. ४.००
भवानी भारती—भारत माताके बारेमें संस्कृत काव्य, हिन्दी अनुवाद सहित	रु. २.५०

भारत संबंधी :

भारत मांकी मांग—श्रीअरविंदके वंदे मातरम्में छपे राष्ट्रीयतापरक लेख	रु. ५.००
माताजी और भारत	रु. २.००
भारत—माताजी और श्रीअरविंदके भारतसंबंधी कुछ लेख	रु. २.००

योगसंबंधी :

मानवसे अतिमानवकी ओर	रु. १७.५०
योगके तत्त्व—एक शिष्यके योगसंबंधी प्रारंभिक प्रश्नोंपर दिये गये श्रीअरविंदके उत्तर, माताजीकी टिप्पणियों सहित	रु. ५.००
मंत्र वचन	रु. २.००
जगन्माता—द मदरके कुछ स्थलोंपर माताजीकी व्याख्या	रु. ४.००
ध्यान	रु. ३.००
प्रार्थना और मंत्र	रु. ३.००
गीताकी भूमिका	रु. ४.००
कर्म—कर्मके बारेमें माताजी और श्रीअरविंदके कुछ लेख तथा आश्रममें कर्मका व्यावहारिक रूप	रु. ५.००
अतिमानस योग—पुराणीकृत सान्ध्य वार्ताओंमेंसे श्रीअरविंदके साथ योगसंबंधी बातचीत (यंत्रस्थ)	रु. ५.००

प्रकीर्ण :

प्रकृतिकी कानाफूसी—(माताजीके लेखोंसे संकलित)	रु. ३.००
नर-नारी—नारी बहुत कालसे दासीकी स्थितिमें रहती आयी है माताजी इसके कारण और इससे छुटकारा पानेके उपाय बतलाती हैं	रु. ५.००

नवजन्म—विशेष अवसरोंपर उपहार देने योग्य एक चित्रावली	रु. ३.००

कहानियां जो कुछ और भी कहती हैं:

राजकुमार, महालक्ष्मीका अवतरण—दो प्रतीकात्मक नाटिकाएं	रु. २.००
प्रेमकी विजय	रु. ३.००
नया अभियान	रु. ३.००
गुलदस्ता	रु. ३.००
नया तराना	रु. ३.००
कालके गर्भमें	रु. ३.००

श्रीमातृवाणी—माताजीके ग्रंथोंका १५ खंडोंमें संग्रह	रु. ५००.००

मासिक पत्र:

पुरोधा—	१४ रु. वार्षिक	२२५ रु. आजीवन
अग्निशिखा	१० रु. वार्षिक	१७५ रु. आजीवन
दोनों मिलाकर	२२ रु. वार्षिक	४०० रु. आजीवन

संपर्क सूत्र—संपादक अग्निशिखा एवं पुरोधा
श्रीअरविंद सोसायटी पांडिचेरी—६०५००२

NO 99623
DATE....4-12-2000